पटना : जल-प्रलय, 1975

फणीश्वरनाथ रेणु

कुत्ते की आवाज

मेरा गांव ऐसे इलाके में है जहां हर साल पश्चिम, पूरब और दक्षिण की- कोशी, पनार, महानंदा और गंगा की-बाढ़ से पीड़ित प्राणियों के समूह आकर पनाह लेते हैं, सावन-भादों में ट्रेन की खिड़कियों से विशाल और सपाट धरती पर गाय, बैल, भैंस, भेड़, बकरों के हजारों झुंड-मुंड देखकर ही लोग बाढ़ की विभीषिका का अंदाज लगाते हैं।

परती क्षेत्र में जन्म लेने के कारण अपने गांव के अधिकांश लोगों की तरह मैं भी तैरना नहीं जानता। किंतु दस वर्ष की उम्र से पिछले साल तक-ब्वॉय स्काउट, स्वयंसेवक, राजनीतिक कार्यकर्ता अथवा रिलीफ-कर्कर की हैसियत से बाढ़-पीड़ित क्षेत्रों में काम करता रहा हूं। और लिखने की बात? हाई-स्कूल में बाढ़ पर लेख लिखकर प्रथम पुरस्कार पाने से लेकर – 'धर्मयुग' में 'कथा-दशक' के अंतर्गत बाढ़ की पुरानी कहानी को नये पाठ के साथ प्रस्तुत कर चुका हूँ। जय गंगा (1947), डायन कोशी (48), हड्डियों का पुल (48) आदि छुटपुट रिपोर्ताज के अलावा मेरे कई उपन्यासों में बाढ़ की विनाश-लीलाओं के अनेक चित्र अंकित हुए हैं। किंतु, गांव में रहते हुए बाढ़ से घिरने, बहने, भंसने और भोगने का अनुभव कभी नहीं हुआ। वह तो पटना शहर में 1967 में ही हुआ, जब अट्ठारह घंटे की अविराम वृष्टि के कारण पुनपुन का पानी राजेंद्र नगर, कंकड़ बाग तथा अन्य निचले हिस्सों में घुस आया था। अर्थात् बाढ़ को मैंने भोगा है, शहरी आदमी की हैसियत से। इसलिए इस बार जब बाढ़ का पानी प्रवेश करने लगा, पटना का पश्चिमी इलाका छाती-भर पानी में डूब गया तो हम घर में ईंधन, आलू, मोमबत्ती, दियासलाई, सिगरेट, पीने का पानी और कांपोज की गोलियां जमाकर बैठ गये और प्रतीक्षा करने लगे।

समाचार दिल दहलानेवाला था। कलेजा धड़क उठा। मित्र के चेहरे पर भी आतंक की कई रेखाएँ उभरीं। किंतु हम तुरंत ही सहज हो गये यानी चेहरे पर चेष्टा करके सहजता ले आये, क्योंकि हमारे चारों ओर कहीं कोई परेशान नजर नहीं आ रहा था। पानी देखकर लौटे हुए लोग आम दिनों की तरह हंस-बोल रहे थे; बल्कि आज तनिक अधिक ही उत्साहित थे।

सुबह सुना, राजभवन और मुख्यमंत्री-निवास प्लवित हो गया है। दोपहर में सूचना मिली, गोलघर जल से घिर गया है! (यों, सूचना बंगला में इस वाक्य से मिली थी – "जानो! गोलघर डूबे गेछे !") और पांच बजे जब कॉफी हाउस जाने के लिए (तथा शहर का हाल मालूम करने) निकला तो रिक्शेवाले ने हंसकर कहा – "अब कहां जाइयेगा? कॉफी हाउस में तो 'अबले' पानी आ गया होगा।"

"चलो, पानी कैसे घुस गया है, वही देखना है," ...कहकर हम रिक्शा पर बैठ गये। साथ में नयी कविता के एक विशेषज्ञ व्याख्याता-आचार्य-कवि मित्र थे, जो मेरी अनवरत अनर्गल-अनगढ़ गद्यमय स्वगतोक्ति से कभी बोर नहीं होते (धन्य हैं!)।

मोटर, स्कूटर, ट्रैक्टर, मोटर साइकिल, ट्रक, टमटम, साइकिल, रिक्शा पर और पैदल लोग पानी देखने जा रहे हैं, लोग पानी देखकर लौट रहे हैं। देखने-वालों की आंखों में, जुबान पर एक ही जिज्ञासा – 'पानी कहां तक आ गया है?' देखकर लौटते हुए लोगों की बातचीत – "फ्रेजर रोड पर आ गया! आ गया क्या, पार कर गया। श्रीकृष्णपुरी, पाटलिपुत्र कॉलोनी, बोरिंग रोड, इंडस्ट्रियल एरिया का कहीं पता नहीं...अब भट्टाचार्जी रोड पर पानी आ गया होगा..छाती-भार पानी है। विमेंस कॉलिज के पास 'डुबाव-पानी' है।...आ रहा है!... आ गया !!... घुस गया...डूब गया...डूब गया...बह गया !"

हम जब कॉफी हाउस के पास पहुंचे, कॉफी हाउस बंद कर दिया गया था। सड़क के एक किनारे एक मोटी डोरी की शक्ल में गेरुआ-झाग-फेन में उलझा पानी तेजी से सरकता आ रहा था। मैंने कहा –"आचार्यजी, आगे जाने की जरूरत नहीं। वह देखिए-आ रहा है...मृत्यु का तरल दूत !"

आतंक के मारे मेरे दोनों हाथ बरबस जुड़ गये और सभय प्रणाम-निवेदन में मेरे मुंह से कुछ अस्फुट शब्द निकले (हां, मैं बहुत कायर और डरपोक हूं!)।

रिक्शावाला बहादुर है। कहता है – "चलिए न – थोड़ा और आगे !" भीड़ का एक आदमी बोला – "ए रिक्शा, करेंट बहुत तेज है। आगे मत जाओ !"

मैंने रिक्शेवाले से अनुनय-भरे स्वर में कहा – "लौटा ले भैया। आगे बढ़ने की जरूरत नहीं।"

रिक्शा मोड़कर हम 'अप्सरा' सिनेमा-हॉल (सिनेमा-शो बंद!) के बगल से गांधी मैदान की ओर चले। पैलेस होटल और इंडियन एयर लाइंस दफ्तर के सामने पानी भर रहा था। पानी की तेज धारा पर लाल-हरे 'नियन' विज्ञापनों की परछाइयां सैंकड़ों रंगीन सांपों की सृष्टि कर रही थी। गांधी मैदान की रेलिंग के सहारे हजारों लोग खड़े देख रहे थे। दशहरा के दिन रामलीला के 'राम' के रथ की प्रतीक्षा में जितने लोग रहते हैं उससे कम नहीं थे...गांधी मैदान के आनंद-उत्सव, सभा-सम्मेलन और खेल-कूद की सारी स्मृतियों पर धीरे-धीरे एक गैरिक आवरण आच्छादित हो रहा था। हरियाली पर शनैः शनैः पानी फिरते देखने का अनुभव सर्वथा नया था।

कि इसी भीच एक अधेड़, मुस्टंड और गंवार जोर-जोर से बोल उठा- "ईह ! जब दानापुर डूब रहा था तो पटनियां बाबू लोग उलटकर देखने भी नहीं गये...अब बूझो !"

मैंने अपने आचार्य-कवि मित्र से कहा – "पहचान लीजिए। यही है वह 'आम आदमी', जिसकी खोज हर साहित्यिक गोष्ठियों में होती रहती है। उसके वक्तव्य में 'दानापुर' के बदले 'उत्तर बिहार' अथवा कोई भी बाढ़ ग्रस्त ग्रामीण क्षेत्र जोड़ दीजिए..."

शाम के साढ़े सात बज चुके और आकाशवाणी के पटना-केंद्र से स्थानीय समाचार प्रसारित हो रहा था। पान की दुकानों के सामने खड़े लोग चुपचाप, उत्कर्ण होकर सुन रहे थे...

"...पानी हमारे स्टुडियो की सीढ़ियों तक पहुंच चुका है और किसी भी क्षण स्टुडियो में प्रवेश कर सकता है।"

समाचार दिल दहलानेवाला था। कलेजा धड़क उठा। मित्र के चेहरे पर भी आतंक की कई रेखाएँ उभरीं। किंतु हम तुरंत ही सहज हो गये यानी चेहरे पर चेष्टा करके सहजता ले आये, क्योंकि हमारे चारों ओर कहीं कोई परेशान नजर नहीं आ रहा था। पानी देखकर लौटे हुए लोग आम दिनों की तरह हंस-बोल रहे थे; बल्कि आज तनिक अधिक ही उत्साहित थे। हां, दुकानों में थोड़ी हड़बड़ी थी। नीचे के सामान ऊपर किये जा रहे थे। रिक्शा, टमटम, ट्रक और टेंपो पर सामान लादे जा रहे थे। खरीद-बिक्री बंद हो चुकी थी। पानवालों की बिक्री अचानक बढ़ गयी थी। आसन्न संकट से कोई प्राणी आतंकित नहीं दिख रहा था।

...पानवाले के आदमकद आईने में उतने लोगों के बीच हमारी ही सूरतें 'मुहर्रमी' नजर आ रही थीं। मुझे लगा, अब हम यहां थोड़ी देर भी ठहरेंगे तो वहां खड़े लोग किसी भी क्षण ठठाकर हम पर हंस सकते थे – 'जरा ईन बुजदिलों का हुलिया देखो?' क्योंकि वहां ऐसी ही बातें चारों ओर से उछाली जा रही थीं – "एक बार डूब ही जाये !...धनुष्कोटि की तरह पटना लापता न हो जाये कहीं !... सब पाप धुल जायेगा...चलो, गोलघर के मुंडेरे पर ताश की गड्डी लेकर बैठ जायें...विस्कोमान बिल्डिंग की छत पर क्यों नहीं? ...भई, यही माकूल मौका है। इनकम टैक्सवालों को ऐन इसी मौके पर काले कारबारियों के घर पर छापा मारना चाहिए। आसामी बा-माल..."

राजेंद्रनगर चौराहे पर 'मैगजिन कॉर्नर' की आखिरी सीढ़ियों पर पत्र-पत्रिकाएं पूर्ववत् बिछी हुई थीं। सोचा, एक सप्ताह की खुराक एक ही साथ ले लूं।

क्या-क्या ले लूँ? ...हेडली चेज, या एक ही सप्ताह में फ्रेंच/जर्मन सिखा देनेवाली किताबें, अथवा 'योग' सिखाने वाली कोई सचित्र किताब? मुझे इस तरह किताबों को उलटते-पलटते देखकर दुकान का नौजवान मालिक कृष्णा पता नहीं क्यों मुस्कराने लगा। किताबों – को छोड़ कई हिंदी-बंगला और अंग्रेजी सिने पत्रिकाएं लेकर लौटा। मित्र से विदा होते हुए कहा – "पता नहीं, कल हम कितने पानी में रहें।...बहरहाल, जो कम पानी में रहेगा वह ज्यादा पानी में फंसे मित्र की सुधि लेगा।"

फ्लैट में पहुंचा ही था कि 'जनसंपर्क' की गाड़ी भी लाउडस्पीकर से घोषणा करती हुई राजेंद्रनगर पहुंच चुकी थी। हमारे 'गोलंबर' के पास कोई भी आवाज, चारों बड़े ब्लॉकों की इमारतों से टकराकर मंडराती हुई, चार बार प्रतिध्वनित होती है। सिनेमा अथवा लॉटरी की प्रचार-गाड़ी यहां पहुंचते ही – 'भाइयों' पुकारकर एक क्षण के लिए चुप हो जाती है। पुकार मंडराती हुई प्रतिध्वनित होती है- भाइयों ..भाइयों भाइयों...! एक अलमस्त जवान रिक्शाचालक है जो अक्सर रात के सन्नाटे में सवारी पहुंचाकर लौटते समय इस गोलंबर के पास अलाप उठाता है – 'सुन मोरे बंधु रे-ए-ए...सुन मोरे मितवा-वा-वा-य।'

गोलंबर के पास जनसंपर्क की गाड़ी से ऐलान किया जाने लगा- 'भाइयों!' ऐसी संभावना है ...कि बाढ़ का पानी ...रात्रि के करीब बारह बजे तक ... लोहानीपुर, कंकड़बाग ...और राजेंद्रनगर में ...घुस जाये । अतः आप लोग सावधान हो जायें।

(प्रतिध्वनि। सावधान हो जायें ! सावधान हो जायें !!...)
मैंने गृहस्वामिनी से पूछा – "गैस का क्या हाल है?"

"बस, उसी का डर है। अब खत्म ही होनेवाला है। असल में सिलिंडर में 'मीटर-उटर' की तरह कोई चीज नहीं होने से कुछ पता नहीं चलता। लेकिन, अंदाज है कि एक या दो दिन...कोयला है। स्टोव है। मगर किरासन एक ही बोतल..."

"फिलहाल, बहुत है ...बाढ़ का भी यही हाल है। मीटर-उटर की तरह कोई चीज नहीं होने से पता नहीं चलता कि कब आ धमके।" – मैंने कहा।

सारे राजेंद्रनगर में 'सावधान-सावधान' ध्वनि कुछ देर गूंजती रही। ब्लॉक के नीचे की दुकानों से सामान हटाये जाने लगे। मेरे फ्लैट के नीचे के दुकानदार ने पता नहीं क्यों, इतना कागज इक्ट्ठा कर रखा था। एक अलाव लगाकर सुलगा दिया। हमारा कमरा धुएँ से भर गया।

फुटपाथ पर खुली चाय की झुग्गी दुकानों में सिगड़ियाँ सुलगी हुई थीं और यहां बहुत रात तक मंडली बनाकर जोर-जोर से बातें करने का रोज का सिलसिला जारी था। बात के पहले या बाद में बगैर कोई गाली जोड़े यहां नहीं बोला जाता – "गांधी मैदान (सरवा) एकदम लबालब भर गया...(अरे तेरी मतारी का) करंट में इतना जोर का फोर्स है कि (ससुरा) रिक्शा लगा कि उलटियै जायेगा ...गांजा फुरा गया का हो रामसिंगार? चल जाय एक चिलम 'बालुचरी-माल' – फिर यह शहर (बेट्चः) डूबे या उबरे।"

बिजली ऑफिस के 'वाचमैन साहेब' ने पश्चिम की ओर मुंह करके ब्लॉक नंबर एक के नीचे जमी दूसरी मंडली के किसी सदस्य से ठेठ मगही में पूछा-"का हो! पनिया आ रहलौ है?"

जवाब में एक कुत्ते ने रोना शुरू किया। फिर दूसरे ने सुर में सुर मिलाया। फिर तीसरे ने। करुण आर्त्तनाद की भयोत्पादक प्रतिध्वनियां सुनकर सारी काया सिहर उठी। किंतु एक साथ करीब एक दर्जन मानवकंठों से गलियों के साथ प्रांतवाद के शब्द निकले –"मार स्साले को। अरे चुप...चौप ! (प्रतिध्वनि : चौप ! चौप ! चौप !!)

कुत्ते चुप हो गये। किंतु आनेवाले संकट को वे अपने 'सिक्स्थ सेंस' से भांप चुके थे...अचानक बिजली चली गयी। फिर तुरंत ही आ गयी...शुक्र है!
भोजन करते समय मुझे टोका गया – "की होलो? खाच्छो ना केन ?"

"खाच्छि तो ... खा तो रहा हूं।" – मैंने कहा – "याद है! उस बार जब पुनपुन का पानी आया था तो सबसे अधिक इन कुत्तों की दुर्दशा हुई था।"

हमें 'भाइयों! भाइयों!' संबोधित करता हुआ जनसंपर्कवालों का स्वर फिर गूंजा। इस बार 'ऐसी संभावना है' के बदले 'ऐसा आशंका है' कहा जा रहा था। और ऐलान में 'खतरा' और 'होशियार' दो नये शब्द जोड़ दिये थे ...आशंका! खतरा ! होशियार...।

रात के साढ़े दस-ग्यारह बजे तक मोटर-गाड़ियां, रिक्शे, स्कूटर सायकिल तथा पैदल चलनेवालों की 'आवाजाही' कम नहीं हुई। और दिन तो अब तक सड़क सूनी पड़ जाती थी!... पानी अब तक आया नहीं? सात बजे शाम को फ्रेजर रोड से आगे बढ़ चुका था।

"का हो रामसिंगार, पनियां आ रहलौ है?"
"न आ रहलौ है।"

सारा शहर जगा हुआ है, पच्छिम की ओर कान लगाकर सुनने की चेष्टा करता हूं। हां, पीरमुहानी या सालिमपुर-अहरा अथवा जनककिशोर-नवलकिशोर रोड की ओर से कुछ हलचल की आवाज आ रही है। लगता है, एक डेढ़ बजे रात तक पानी राजेंद्रनगर पहुंचेगा।

सोने की कोशिश करता हूं। लेकिन नींद आयेगी भी? नहीं, कांपोज की टिकिया अभी नहीं। कुछ लिखूं? किंतु क्या लिखूं कविता? शीर्षक-बाढ़ की आकुल प्रतीक्षा? धत्त!

नींद नहीं, स्मृतियां आने लगीं – एक-एक कर। चलचित्र, के बेतरतीब दृश्यों की तरह !...

...1947...मनिहारी (तब पूर्णियां अब कटिहार जिला !) के इलाके में गुरुजी (स्व. सतीशनाथ भादुडी) के साथ गंगा मैया की बाढ़ से पीड़ित क्षेत्र में हम नाव पर जा रहे हैं। चारों ओर पानी ही पानी। दूर, एक 'द्वीप' जैसा बालू-चर दिखायी पड़ा। हमने कहा, वहां चलकर जरा चहलकदमी करके टांगे सीधी कर लें। भादुडीजी कहते हैं – "किंतु, सावधान ! ...ऐसी जगहों पर कदम रखने के पहले यह मत भूलना कि तुमसे पहले ही वहां हर तरह के प्राणी शरणार्थी के रूप में मौजूद मिलेंगे" और सचमुच – चींटी-चींटे से लेकर सांप-बिच्छू और लोमड़ी-सियार तक यहां पनाह ले रहे थे ...भादुडीजी की हिदायत थी. हर नाव पर 'पकाही घाव' (पानी में पैर की उंगलियां सड़ जाती हैं। तलवों में भी घाव हो जाता है।) की दवा, दियासलाई की डिबिया और किरासन तेल रहना चाहिए और सचमुच हम जहां जाते, खाने-पीने की चीज से पहले 'पकाही घाव' की दवा और दियासलाई की मांग होती। ....1949 उस बार महानंदा की बाढ़ से घिरे बापसी थाना के एक गांव में हम पहुंचे। हमारी नाव में रिलीफ के डॉक्टर साहब थे। गांव के बीमारों को नाव पर चढ़ाकर कैंप में ले जाता था। एक बीमार नौजवान के साथ उसका कुत्ता भी 'कुंई-कुंई' करता हुआ नाव पर चढ़ आया। डॉक्टर साहब कुत्ते को देखकर 'भीषण भयभीत' हो गये और चिल्लाने लगे – "आ रे! कुकुर नहीं, कुकुर नहीं...कुकुर को भगाओ!" बीमार नौजवान छप-से पानी में उतर गया- "हमारा

हमारे ब्लॉक के पास गोलंबर में नाव पहुंची ही थी कि अचानक चारों ब्लॉक की छतों पर खड़े लड़कों ने एक ही साथ किलकारियों, सीटियों, फब्तियों की वर्षा कर दी और इस गोलंबर में किसी भी आवाज की प्रतिध्वनि मंडरा-मंडराकर गूंजती है। सो सब मिलकर स्वयं ही जो ध्वनि-संयोजन हुआ उसे बड़े-से-बड़ा गुणी संगीत-निर्देशक बहुत कोशिश के बावजूद नहीं कर पाते।

कुकुर नहीं जायेगा तो हमहुं नहीं जायेगा।" फिर कुत्ता भी छपाक पानी में गिरा- "हमारा आदमी नहीं जायेगा तो हमहूं नहीं जायेगा" ....परमान नदी की बाढ़ में डूबे हुए एक 'मुसहरी' (मुसहरों की बस्ती) में हम राहत बांटने गये। खबर मिली थी वे कई दिनों से मछली और चूहों को झुलसा-कर खा रहे हैं। किसी तरह जी रहे हैं। किंतु टोले के पास जब हम पहुंचे तो ढोलक और मंजीरा की आवाज सुनायी पड़ी। जाकर देखा, एक ऊंची जगह 'मचान' बनाकर स्टेज की तरह बनाया गया है। 'बलवाही' नाच हो रहा था। लाल साड़ी पहनकर काला-कलूटा 'नटुआ' दुलहिन का हाव-भाव दिखला रहा था; यानी, वह 'धानी' है –'घरनी'। धानी घर छोड़कर मायके भागी जा रही है और उसका घरवाला (पुरुष) उसको मनाकर राह से लौटाने गया है। घरनी कहती है- "तुम्हारी बहन की जुबान बड़ी तेज है। दिन-रात खराब गाली बकती रहती है और तुम्हारी बुढ़ियां मां बात के पहले तमाचा मारती है। मैं तुम्हारे घर लौटकर नहीं जाती।" तब घरवाला उससे कहता है, यानी गा-गाकर समझाता है- 'चल गे धानी घर घुरी, बहिनिक देवै टांग तोड़ी धानी गे, बुढ़िया के करवै घर से बा-हा-र (ओ धानी घर लौट चलो! बहन के पैर तौड़ दूंगा और बुढ़िया को घर से बाहर निकाल दूंगा!) इस पद के साथ ही ढोलक पर द्रुत ताल बजने लगा-'धागिड़गिड़ धागिड़गिड़-चकैके चकधुम-चकैके चकधुम चकधुम- चकधुम!' कीचड़-पानी में लथ-पथ भूखे-प्यासे नर-नारियों के झुंड में मुक्त खिलखिलाहट लहरें लेने लगती है। हम रिलीफ बांटकर भी ऐसी हंसी उन्हें दे सकेंगे क्या! (शास्त्रीजी, आप कहां हैं? बलवाही नाच की बात उठते ही मुझे अपने परम मित्र भोला शास्त्री की याद हमेशा क्यों आ जाती है? यह कभी बाद में!) ...एक बार, 1937 में, सिमरवनी-शंकरपुर में बाढ़ के समय 'नाव' को लेकर लड़ाई हो गयी थी। मैं उस समय 'बालचर' (ब्वॉय स्काउट) था। गांव के लोग नाव के अभाव में केले के पौधों का 'भेला' बनाकर किसी तरह काम चला रहे थे और वहीं सवर्ण जमींदार के लड़के नाव पर हारमोनियम-तबला के साथ 'झिंझिर' (जल-विहार) करने निकले थे। गांव के नौजवानों ने मिलकर उनकी नाव छीन ली थी। थोड़ी मारपीट भी हुई थी... और 1967 में जब पुनपुन का पानी राजेंद्रनगर में घुस आया था, एक नाव पर कुछ सजे-धजे युवक और युवतियों की टोली-टोली किसी फिल्म में देखे हुए कश्मीर का आनंद घर बैठे लेने के लिए निकली थी। नाव पर स्टोव जल रहा था- केतली चढ़ी हुई थी, बिस्कुट के डिब्बे खुले हुए थे, एक लड़की प्याली में चम्मच डालकर एक अनोखी अदा से नेस्कैफे के पाउडर को मथ रही थी- 'एस्प्रेसो' बना रही थी, शायद। दूसरी लड़की बहुत मनोयोग से कोई सचित्र और रंगीन पत्रिका पढ़ रही थी। एक युवक दोनों पांवों को फैलाकर बांस की लग्घी से नाव खे रहा था। दूसरा युवक पत्रिका पढ़नेवाली लड़की के सामने, अपने घुटने पर कोहनी टेककर कोई मनमोहक 'डायलॉग' बोल रहा था। पूरे वॉल्युम में बजते हुए 'ट्रांजिस्टर' पर गाना आ रहा था...'हवा में उड़ता जाये, मोरा लाल दुपट्टा मलमल का, हो जी हो जी!' हमारे ब्लॉक के पास गोलंबर में नाव पहुंची ही थी कि अचानक चारों ब्लॉक की छतों पर खड़े लड़कों ने एक ही साथ किलकारियों, सीटियों, फब्तियों की वर्षा कर दी और इस गोलंबर में किसी भी आवाज की प्रतिध्वनि मंडरा-मंडराकर गूंजती है। सो सब मिलकर स्वयं ही जो ध्वनि-संयोजन हुआ उसे बड़े-से-बड़ा गुणी संगीत-निर्देशक बहुत कोशिश के बावजूद नहीं कर पाते। उन फूहड़ युवकों की सारी 'एक्जिबिशनिज्म' तुरंत छूमंतर हो गयी और युवतियों के रंगे लाल-लाल ओठ और गाल काले पड़ गये। नाव पर अकेला ट्रांजिस्टर था जो पूरे दम के साथ मुखर था – 'नैया तोरी मंझदार, होश्यार होश्यार !'

"का हो रामसिंगार, पनिया आ रहलौ है?"
"ऊँहूँ, न आ रहलौ है।"

ढाई बज गये, मगर पानी अब तक आया नहीं। लगता है कहीं अटक गया, अथवा जहां तक आना था आकर रुक गया, अथवा तटबंध पर लड़ते हुए इंजीनियरों की जीत हो गयी शायद, या कोई दैवी चमत्कार हो गया ! नहीं तो पानी कहीं भी जायेगा तो किधर से? रास्ता तो इधर से ही है ...चारों ब्लॉकों में प्रायः सभी प्लैटों की रोशनी जल रही है, बुझ रही है। सभी जगे हुए हैं। कुत्ते रह-रहकर सामूहिक रुदन शुरू करते हैं और उन्हें रामसिंगार की मंडली डांटकर चुप करा देती है। चौप...चौप !

मुझे अचानक अपने उन मित्रों और स्वजनों की याद आयी जो कल से ही पाटलिपुत्र कॉलोनी, श्रीकृष्णपुरी, वोरिंग रोड के अथाह जल में घिरे हैं...जितेंद्रजी, विनीताजी, बाबू भैया, इंदिराजी, पता नहीं कैसे हैं- किस हाल में हैं वे! शाम को एक बार

पड़ोस में जाकर टेलिफोन करने के लिए चोंगा उठाया – बहुत देर तक कई नंबर डायल करता रहा। उधर सन्नाटा था एकदम। कोई शब्द नहीं – 'टुंग-फुंग' कुछ भी नहीं।

बिस्तर पर करवट लेते हुए फिर एक बार मन में हुआ, कुछ लिखना चाहिए। लेकिन क्या लिखना चाहिए? कुछ भी लिखना संभव नहीं और क्या जरूरी है कि कुछ लिखा ही जाये? नहीं। फिर स्मृतियों को जगाऊँ तो अच्छा...पिछले साल अगस्त में नरपतगंज थाना के चकरदाहा गांव के पास छाती –भर पानी में खड़ी एक आसन्नप्रसवा हमारी ओर गाय की तरह टुकुर-टुकुर देख रही थी...।

नहीं, अब भूलि-बिसरी याद नहीं। बेहतर है, आंखे मूंदकर सफेद भेड़ों के झुंड देखने की चेष्टा करूं ...उजले-उजले, सफेद भेड़... सफेद भेड़ों के झुंड। झुंड ...किंतु सभी उजले भेड़ अचानक काले हो गये। बार-बार आंखे खोलता हूं, मूंदता हूं। काले को उजला करना चाहता हूं। भेड़ों के झुंड भूरे हो जाते हैं। उजले ...भेड़...उजले भेड़...काले भूरे...किंतु उजले...उजले....गेहुंए रंग के भेड़...!

"ओई द्याखो-एसे गेछे जल!"- झकझोरकर मुझे जगाया गया।
घड़ी देखी, ठीक साढ़े पांच बज रहे थे। सवेरा हो चुका ...आ रहलौ है! आ रहलौ है पनियां। पानी आ गेलौ। हो रामसिंगार! हो मोहन! हो रामचन्नर-अरे हो..।

आंखे मलता हुआ उठा। पश्चिम की ओर, थाना के सामने सड़क पर मोटी डोरी की शक्ल में –मुंह में झाग-फेन लिए-पानी आ रहा है; ठीक वैसा ही जैसा शाम को कॉफी हाउस के पास देखा था। पानी के साथ-साथ चलता हुआ, किलोल करता हुआ बच्चों का एक दल ...उधर, पच्छिम-दक्षिण कोने पर-दिनकर अतिथिशाला से और आगे-भंगी बस्ती के पास बच्चे कूद क्यों रहे हैं? नहीं बच्चे नहीं, पानी है। वहां मोड़ है, थोड़ा अवरोध है – इसलिए पानी उछल रहा है रहा है...पश्चिम-उत्तर की ओर, ब्लॉक नंबर एक के पास-पुलिस चौकी के पिछवाड़े में पानी का पहला रेला आया ...ब्लॉक नंबर चार के नीचे सेठ की दुकान के बायें बाजू में लहरें नाचने लगीं।

अब मैं दौड़कर छत पर चला गया। चारों ओर शोर-कोलाहल-कलरव-चीख-पुकार और पानी का कल-कल रव। लहरों का नर्त्तन। सामने फुटपाथ को पारकर अब पानी हमारे पिछवाड़े में सशक्त बहने लगा है। गोलंबर के गोल पार्क के चारों ओर पानी नाच रहा है...आ गया, आ गया! पानी बहुत तेजी से बढ़ रहा है, चढ़ रहा है, करेंट कितना तेज है? सोन का पानी है। नहीं, गंगाजी का है। आ गैलो...

सामने की दीवार की ईंटे जल्दी-जल्दी डूबती जा रही हैं। बिजली के खंभे का काला हिस्सा डूब गया। ताड़ के पेड़ का तना क्रमशःडूबता जा रहा है... डूब रहा है।

...अभी यदि मेरे पास मूवी कैमरा होता, अगर एक टेप-रेकॉर्डर होता! बाढ़ तो बचपन से ही देखता आया हूं, किंतु पानी का इस तरह आना कभी नहीं देखा। अच्छा हुआ जो रात में नहीं आया। नहीं तो भय के मारे न जाने मेरा क्या हाल होता...देखते ही देखते गोल पार्क डूब गया। हरियाली लोप हो गयी। अब हमारे चारों ओर पानी नाच रहा था।...भूरे रंग के भेड़ों के झुंड। भेड़ दौड़ रहे हैं। -भूरे भेड़। वह चायवाले की झोंपड़ी गयी, गयी, चली गयी। काश, मेरे पास एक मूवी कैमरा होता, एक टेपरेकॉर्डर होता ...तो क्या होता? अच्छा है, कुछ भी नहीं। कलम थी, वह भी चोरी चली गयी। अच्छा है, कुछ भी नहीं है मेरे पास।

अचानक सारी देह में कंपकंपी शुरू हुई। पानी के बढ़ने की यह रफ्तार है तो पता नहीं पानी कितना बढ़े। वहां कोई बैठा थोड़ी है कि रोक देगा – अब नहीं, बस अब, हो गया। 'ग्राउंड-फ्लोर' में छाती भर पानी है। इसके बाद भी यदि पानी बढ़ता गया तो दूसरी मंजिल तक न भी आये – कांट्रैक्टर द्वारा निर्मित यह मकान निश्चय ही ढह जायेगा। 1967 में पुनपुन का पानी एक सप्ताह तक झेल चुके हैं ये मकान। हर साल घनघोर वर्षा के बाद कई दिनों तक घुटने-भर पानी में डूबे रहते हैं।

और सरजमीन ठोस नहीं – 'गार्बेज' भरकर नगर बसाया गया है...पुनपुन की बाढ़ इसके 'पासंग' बराबर भी नहीं थी। दोनों ओर से तेज धारा गुजर रही है। पानी चक्राकार नाच रहा है, अर्थात दोनों ओर गड्ढे गहरे हो रहे हैं ... बेबस कुत्तों का सामूहिक रुदन, बहते हुए सूअर के बच्चों की चिचियाहट, कोलाहल-कलरव-कुहराम !...हो रामसिंगार, रिक्शवा बहलौ हो। घर-घर-घर!

...कल एक पत्र गांव भेज दिया था। किंतु कल एक कप कॉफी नहीं पी सका। कल 'डोसा' खाने को बहुत मन कर रहा था...कोक पीने की इच्छा हो रही है। कंठ सूख रहा है। प्रियजनों की याद आ रही है।

थर-थर कांपता हुआ छत से उतरकर फ्लैट में आया और ठाकुर रामकृष्ण देव के पास जाकर बैठ गया – 'ठाकुर ! रक्षा करो। बचाओ इस शहर को ...इस जलप्रलय में...'

"अरे दुर साला। कांदछिस केन ? ...रोता क्यों है !वाहर देख! साले ! तुम लोग थोड़ी-सी मस्ती में जब चाहो तव राह-चलते 'कमर दुलिये-दुलिये' (कमर लचकाकर, कूल्हे मटकाकर) ट्वीस्ट नाच सकते हो। रंबा-संबा-हीरा-टीरा और उलंग नृत्य कर सकते हो और बृहत सर्वग्रासी महामत्ता रहस्यमयी प्रकृति कभी नहीं नाचेगी ? ...ए-बार नाच देख ! भयंकरी नाच रही है – ता-ता-थेई-थेई, ता-ता थेई-थेई। तीव्रा तीव्र वेगा शिवनर्त्त की गीतप्रिया वाद्यरता प्रेतनृत्यपरायणा नाच रही है। जा, तू भी नाच !"

अगरबत्ती जलाकर, शंख फूंकता हूं – नाचो मां !...उलंगिनी नाचे रणरंगे, आमरा नृत्य करिसंगे। ता-ता थेई-थेई, ता-ता थेई-थेई ...मदमत्ता मातंगिनी उलंगिनी-जी भरकर नाचो।

बाहर कलरव-कोलाहल बढ़ता ही जाता है। मोटर, ट्रक, ट्रैक्टर, स्कूटर पानी की धारा की चीरती, गरजती-गुर्राती गुजरती हैं ...सुबह सात बजे ही धूप इतनी तीखी हो गयी? सांस लेने में कठिनाई हो रही है। संभवतः ऐसी घड़ी में वातावरण में ऑक्सिजन की कमी हो जाती है। उमस, पसीना, कंपन, धड़कन? तो, क्या...तो क्या ?

अब, तुमुल तरंगिनी के तरल नृत्य और वाद्य की ध्वनियों को शब्दों में बांधना असंभव है! अब...अब...सिर्फ...हिल्लोल-कलोल-कलकल कुलकुल-छहर-छहर-झहर-झहर-झरझर-अर, र-र-र- है –ए-ए धिग्रा-धिंग-धातिन-धा तिनधा-आ-आहै-मैया-गे-झांय-झारय-झघ-झघ-झांय झिझिना-झिझिना कललकुलल-कुल-कु वां-आं-ये-बां-आं-म-भौ-ऊं-ऊं ...चेईं-चेईं-छछना-छछना-हा-हा-हा ततथा-ततथा-कलकल-कुलकुल...!!

पानी बढ़ना रुक गया है? ऐं? रुक गया है? बीस मिनट हो गये। पानी जस-का-तस, जहां-का-तहां है? कम-से-कम अभी तो रुक गया है।

...तू-ऊ-ऊ-ऊ! फिर मैंने शंखध्वनि की? नहीं। रेलवे-लाइन पर एक इंजन तार स्वर में चीख रहा है– तू-ऊ-ऊ-ऊ-ऊ !

कड़वी चाय के साथ कांपोज दो टिकिया लेकर बिछावन पर लेट जाता हूं।

जो बोले सो निहाल

आंखे मूंदे देर तक, 'शवासन' की मुद्रा में लेटा रहा। किंतु, प्रशांतिकर औषधि (ट्रैक्विलाइजर) तथा 'आसन' का कोई सुफल नहीं हुआ। इसके विपरीत, आंतरिक यंत्रणा धीरे-धीरे और भी तीव्र, और गंभीर होकर प्राण के निकटतम हो गयी। दीर्घ निःश्वास का कम बढ़ता गया। एक बार लगा कि अब सचमुच दम घुट जायेगा। छटपटा उठा। और, आंखे खुलते ही मोहच्छादित! ...यह क्या? कमरे की सभी दीवारों पर, फर्श पर, सामानों पर – नीचे-ऊपर सभी ओर एक रहस्यपूर्ण अलौकिक आलोक-जाल! एक सचल रश्मि-धारा!! ...मेरे सारे शरीर पर बेल-बूटेदार सुफेद झीनी चदरी-सी यह क्या है जो सजीव है? रोमांचित हुआ। फिर तुरंत ही सब कुछ समझ गया...यह तो विश्व-प्रकृति की लीला हो रही है न? मेरे ब्लॉक के चारों ओर फैली हुई, वेगवती जलधारा पर सूर्य कि प्रखर किरणें पड़ती हैं और प्रतिच्छटा प्रेक्षित होकर हमारे कमरे में इंदरजाल फैला रही हैं? ...'बहुरूपी' – (बंगला नाटक मंडली) के आलोक-संपात करने वाले उस प्रसिद्ध कलाकर का नाम अभी याद नहीं आ रहा ...फिल्मवाले 'आउटडोर' में बड़े-बड़े आईने ले जाते हैं। उनको 'रिफ्लैक्टर' कहते हैं ...अपने कमरे के बड़े आईने में अपने को देखकर मुस्करा पड़ा। मुंह-आंख-कान-हाथ-पैर पर वही आभा दौड़ रही थी। लग रहा था, मेरी देह कमरे के शून्य में तैर रही है। इस सम्मोहन से मुक्त होने का मन नहीं करता...

बाहर, कोलाहल ही नहीं-किलोल, तमाशबीनों की भीड़ उमड़ आयी है। घुटने और कमर-भर पानी में लड़के नहा रहे हैं। तैर रहे हैं। जल-किलोल...पुनपुन की बाढ़ के समय भी ऐसा ही मेला लगा था।

...लो, वही जीपवाला फंसा। 'टॉप-गियर' पर गुर्राती हुई आवाज अचानक बंद हो गयी। इसके बाद 'सेल्फ' को चालू करने की चेष्टा में कुछ देर 'खचचचच...खचचच...' फिर निस्तब्ध। निश्चय ही 'गियर बॉक्स' में पानी भर गया होगा। जीप के फंस जाने पर, आसपास जल-विहार करनेवालों और जल-उत्सव देखने-वालों को बड़ी खुशी हुई। जीप के बेबस होते ही एक सम्मिलित हंसी की लहर चारों ओर फैल गयी...पुनपुन की बाढ़ में हमें फंसा देखकर देखनेवालों का पहला जत्था हंसते-हंसते लोटपोट हो गया था। ऊपर की ओर अर्थात् हमारी ओर देखकर ताने देता हुआ एक छोकरा जोर-जोर से बोला था – "अच्छा ! हा-हा-हा-हा ...घर में गैस का सलींडर, पांच मिनट में ही खाना बनानेवाला कूकर, दिन-रात चालू रेडियोग्राम, पलंग के पास टेलीफोन और ठंडा पानी का फ्रीज। अब बोलो –बच्चू ! कहां सटक गयी सारी नवाबी? एं? ही ही ही ही! ...बैरा! बैरा! साहब लोगों को टेबुल पर 'छोटी हाजिरी' दो और मेमसाहब के वास्ते बाथरुम के टब में साबुन का झाग... हाहाहाहा...ठीक हुआ है।"

मैं कभी पश्चिम की खिड़कियों से देखता हूं और कभी पूरब के बरामदे से। पूरब, एक पंचमंजिला बिल्डिंग है। उस मकान की जब नींव डाली गयी थी तो पुनपुन की बाढ़ आ गयी थी। चारों ओर इकट्ठी की गयी ईंटों और गिट्टियों की डेरी पर राह के कुत्तों ने शरण ली थी। पानी हटने के बाद जब इस मकान का काम शुरू हुआ तभी समझा था कि मकान बनानेवाले ने पहले के प्लान पर फिर से विचार कर आवश्यक सुधार किया है।

जीप से उतरकर कई लोग पीछे से गाड़ी को धकेलने लगे तो नहानेवाले लड़कों की टोली मदद करने आ गयी – "अरे साहब, आगे धकेलकर कहां ले जाइगा? पीछे की ओर ठेलकर वापस कीजिए।" कुछ लड़के सामने से धकेलने लगे – 'मार जवानों – हइयो!' कुछ पीछे से ठेलते रहे – "मार जवानो-हइयो !" गाड़ी एक गड्ढे से निकलकर दूसरे में फंस गयी । लड़के खुश होकर नहाने लगे...

रिक्शावां का साहस और उत्साह दुगुना हो गया है। तेज धारा के बावजूद, कमर-भर पानी में नीचे उतरकर रिक्शा को खींच रहे हैं। 'जलकेलि करने-वाले लड़के हर रिक्शेवाले को बिना मांगे मदद दे रहे हैं। रिक्शा को पीछे से ठेलकर पार करवा रहे हैं – "हैइ-यो-यो है-है-है।" भीच-भीच में ट्रैक्टर और ट्रक अपनी सारी ताकत लगाकर पानी को चीरते हुए निकल जाते हैं। पानी में हिलकोरे और गोलंबर के आकाश में गूंजती, मंडराती प्रतिध्वनियां।'

मैं कभी पश्चिम की खिड़कियों से देखता हूं और कभी पूरब के बरामदे से। पूरब, एक

पंचमंजिला बिल्डिंग है। उस मकान की जब नींव डाली गयी थी तो पुनपुन की बाढ़ आ गयी थी। चारों ओर इकट्ठी की गयी ईंटों और गिट्टियों की डेरी पर राह के कुत्तों ने शरण ली थी। पानी हटने के बाद जब इस मकान का काम शुरू हुआ तभी समझा था कि मकान बनानेवाले ने पहले के प्लान पर फिर से विचार कर आवश्यक सुधार किया है। फलतः इस बार जबकि आसपास के मकानों के 'ग्राउंड फ्लोर' घुटने से लेकर छाती-भर पानी में हैं, इस बिल्डिंग के अहाते में चार-पांच इंच-भर पानी है। मकान की पहली सीढ़ी भी पानी से बाहर है ...और संयोग की बात : एक सप्ताह पहले इसके सामनेवाले मैदान में नये मकान की नींव डाली गयी और सोन का पानी आ गया! हमारे ब्लॉक के बायें बाजू में – पटना इंप्रूवमेंट ट्रस्ट के कई नये ब्लॉक बनकर अभी-अभी तैयार हुए हैं – कटिस्नान कर रहे हैं।

"ए कि? जल चले गेछे? कले जल नेई? बड्डो मुश्किल।" – निष्प्राण 'हैंडपंप' के हैंडिल को चलाती हुई लतिकाजी बोलीं।

"किंतु, पुनपुन की बाढ़ के समय तो कभी पानी बंद नहीं हुआ ?" मैंने गंभीरतापूर्वक कहा।

"अरे दुर तोमार...पुनपुन की बाढ़ की बात। मैं पूछ रही हूं कि अब क्या होगा? ...देखूं, टोमैटो की मां के कल में है या वहां भी..." बड़बड़ाती हुई, हाथ में छोटी बाल्टी लेकर छत के रास्ते वह चली गयीं।

महा-मुश्किल मैंने पंप के हैंडिल को चलाकर देखा-एकदम बेजान नहीं। भरोसा है थोड़ा ...राजेंद्रनगर के इलाके में ऊपर के तल्लों में पानी की किल्लत हमेशा रहती है। प्रेशर कम रहता है। बहुत दिनों तक कष्ट झेलने के बाद, तीन साल पहले हमने सड़क के किनारे 'अंडर ग्राउंड मेन लाइन' में डेढ़ सौ फीट 'पाइप' जुड़वाकर हैंडपंप लगवाया। गांव के ट्यूबवेल का पानी जब सूख जाता है – हम ऊपर से पानी डालकर उसको पुनर्जीवित करते हैं। यहां भी वही करना होगा। घड़े से एक 'मग' पानी लिया, पंप की थुथनी (नोजल) को ऊपर की ओर करके पानी डाल दिया, फिर हैंडिल चलाने लगा। तब तक लतिकाजी छोटी बाल्टी में पानी लेकर पहुंची और मुझ पर बरस पड़ी, "एक मग पानी बर्बाद कर दिया न! मुन्नी की मां के फ्लैट से पानी ला रही हूं।"

वह घड़े में पानी डालकर फिर बाहर गयीं तो मैंने हैंडपंप को फिर एक 'मग' पानी पिलाया और हैंडिल चलाने लगा। वह उल्टे पांव दौड़ी आयीं, "तुम समझते क्यों नहीं ? फिर एक मग पानी बर्बाद किया न ? जरा बुद्धि से भी तो काम लिया करो। जब 'मेन पाइप' में ही पानी नहीं तो ...मिछे मिछे ...बेकार पानी डालकर..."

तब तक पंप में जान आ गयी थी। पंप की उलटी हुई थुथनी से पानी का फव्वारा निकला और मैं भीग गया। पुर्षार्थ-भरे स्वर में कहा, "बुद्धि से ही काम लेकर तो अब तक जी रहा हूं, श्रीमतीजी। लीजिए, घर में जितने भी बर्तन हैं – पात्र-अपात्र-कुपात्र-सबमें पानी स्टोर कर लीजिए। श्रीकृष्णपुरी की ओर न पानी है, न बिजली। इधर भी, जब तक है – है..."

"सुना है, स्टेशन भी डूब गया है। गाड़ी बंद..."
मैं कहता हूं, "अरे, स्टेशन क्या डूबा होगा-रेलवे लाइन पर पानी आ गया होगा। लेकिन यह खबर कौन ले लाया?"

"टोमैटो, गांधी और बालाजी वगैरह घर में बंद रहनेवाले लड़के थोड़े हैं! सब निकलकर गया था। सुनछि, एयरोड्रमओ डूबे गेछे।" और स्टीमर सर्विस तो दो दिन पहले से हीं बंद है ...जल-थल-नभ सभी मार्ग बंद !

छत पर गया। ब्लॉक के सभी –बत्तीसों प्लैट के लोग छत पर जमा थे। गंगा नहीं, सोन का पानी है। "गंगा अचानक डेढ़ हाथ नीचे चली गयी.. गंगा मैया की कृपा...नहीं तो, अब तक पटना का नाम-निशान तक नहीं रहता। पुनपुन का क्या हाल है भाई? ...पानी कहां-कहां है और कहां-कहां नहीं है?...पश्चिमी पटना तो समझिए कि एकदम 'डुबिये' गया है, इधर स्टेशन, गांधी मैदान, कमदकुआँ, पीरमुहानी, नाला रोड, लोहानीपुर, मंदीरी-सब जगह कमर से लेकर छाती – भर पानी है। मंदीरी की हालत सबसे बदतर है। अथाह पानी है वहां। नहीं, अशोक राजपथ पर एक बूंद भी पानी नहीं है ... धूप इतनी तेज है तो पानी जरूर घटेगा... आपके कल में पानी आ रहा है न? देखिए, पानी-बिजली कब तक चालू रहे...अब तक कोई नाव नहीं

आयी। नाव नहीं स्टीमर आयेगा आपके लिए...पानी स्टोर कर रहे हैं न ? ...खाना क्या है, बस खिचड़ी पका लो और आलू का भुर्ता। बस वह देखिए –पीपे की नाव बनाकर आ रहे हैं, कुछ लोग।"

सभी नीचे की ओर देखते हैं। नीचे मेला और रेला बढ़ता ही जा रहा है। पता नहीं, इन लड़कों को मोटर का ट्यूब कहां से इतना मिल गया है? ...मिलेगा कहां से? सड़क पर जितनी फंसी गाड़ियां लावारिस पड़ी हुई हैं, सभी के टायर-ट्यूब निकालकर ला रहे हैं।

तैरना, पानी उलीचना और बीच-बीच में ब्लॉक के किसी फ्लैट की खिड़की की ओर देखकर फिकरे कसना – सब कुछ पूर्ववत् चल रहा है ...ऊपर, एक हवाई जहाज मंडरा गया...अरे, ऊपर से क्या देख रहे हो, जरा नीचे उतर आओ भाई ...शायद , हवाई फोटो ले रहा है ...अरे भाई, फोटो लेकर क्या करेगा? सभी अखबारों के मशीनघर में पानी घरघरा रहा है...पता नहीं, क्या हो..पानी बढ़ सकता है...पानी बढ़ा है...हां, देखिए-पानी फिर बढ़ रहा है? एँ? पानी फिर बढ़ने लगा। अब खैर नहीं...

फ्लैट में आकर रेडियों ट्यून किया। सुबह से ही फतुहा-ट्रांसमिसन सेंटर में प्रोग्राम प्रसारित किया जा रहा है...आवाज किसी पेशेवर 'अनाउंसर' की नहीं। शायद, वहां के दरबान या इंजीनिरिंग-सेक्शन के किसी कर्मचारी की आवाज ...सीधे और सपाट ढंग से वह बीच-बीच में सूचना देता है कि छज्जू बाग के मुख्य स्टूडियो में पानी आ जाने के कारण फतुहा से प्रोग्राम हो रहा है ...अब आप एक कव्वाली का रिकार्ड सुनिए। सितार बजने लगता है तो रिकार्ड रोककर कहता है-सुनिए कव्वाली नहीं, यह सितार का रिकार्ड है...अब आप हमारा दिल्ली का समाचार सुनिए...

प्रारंभ की दो पंक्तियां डूब गयीं... "अब आप पूरे समाचार सुनिए। पटना की बाढ़ की स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ है। पिछले अठारह घंटे से पटना का संपर्क देश के शेष भागों से कटा हुआ है। दूरसंचार के सभी साधन भंग हो गये हैं, गाड़ियों का आना-जाना बंद है क्योंकि पटना जंक्शन रेलवे स्टेशन की रेल की पटरियां पानी में डूब गयी हैं। आज एयर इंडिया का विमान पटना हवाई अड्डे पर नहीं उतर सका..."

"अब आप फिल्मी गीत सुनिए...हम तुम कमरे में बंद हों और चाभी खो जाये..."
...अनाउंसर पेसेवर नहीं हो। लेकिन, रिकार्ड उसने चुनकर लगाया है।

रेडियों से-पटना का देश के शेष भागों से संपर्क कट जाने की बात सुनने के बाद मेरे अंदर का 'मैं' कातर हो उठा। ऐसा लगा कि एक द्वीप पर अकेला बैठा हुआ हूं। चारों ओर समुद्र लहरा रहा है। कहीं किसी जहाज का मस्तूल या किसी नाव का पाल नहीं दिखलायी पड़ रहा...

न जाने कब नींद आ गयी। जगा तो दिन के चार बज रहे थे। हर दस मिनट पर पश्चिम की खिड़कियों पर जा खड़ा होना, फिर पूरब के बरामदे पर कर बाहर देखना-नियम-सा बन गया है, हर बार बिजली के खंभे पर, सामने की नंगी दीवार की इंटों पर और ताड़ के तने पर निगाह डालकर देखना कि पानी घटा है या बढ़ रहा है। सो, जागते ही खिड़कियों के सामने जाकर खड़ा हो गया। भीड़ में अपने किसी भी परिचित का चेहरा ढूंढ रहा हूं। नहीं, इस भीड़ में कहीं भी कोई अपना परिचित नहीं...भीड़-प्रिय आदमी कभी किसी का अपना नहीं होता ... वह व्यक्ति अपने परिवार के कनिष्ठतम प्राणी के साथ बाढ़ का मेला देखने आया है। परिवार के सभी सदस्य रंग-बिरंगी पोशाक पहने हुए हैं। औरतें और लड़कियां सजी-धजी हुई हैं। बंगला में इसी को 'हुजुग' कहते हैं। इस हुजुग को, मेला देखनेवाली भीड़ को, देखकर बाढ़ के पानी में डूब मरने को जी करता है...

छत पर आने का मन नहीं करता। यहां ऐसी-ऐसी बातें सुनने को मिलता हैं कि दिल डूबने लगता है और कभी खून गर्म हो जाता है...और कम उम्र की अल्हड़-सी लड़कियों की तरह अधेड़ औरतें बचकानी बातें करने लगती हैं तब। असल में, मैं ही सठिया गया हूं।

...अच्छा, बतलाइए तो, सोन बढ़ रहा है या बढ़ रही शुद्ध है?... मुस्कराहट...नदी तो स्त्रीलिंग है, इसलिए सोन बढ़ रही है...खिलखिलाहट ...आप भी कैसे 'कवी' हैं जी? जानते नहीं, सोन तो मर्द है। नदी नहीं, नद है। समझे? तभी तो राजधानी में घुस आया है...ही ही ही ही! आपने दाढ़ी रख ली, इसीलिए बाढ़ आ गयी। कटा लीजिए, पानी घट जायेगा!... हा हा हा !...

एक भाई साहब हैं जो कभी भी किसी मौके पर कोई ऐसी बात नहीं करते जिसे सुनकर मन में कोई उत्साह या आनंद अथवा राहत मिले। आज दिन-भर अपने प्लैट में पता नहीं हथौड़े से क्या ठक-ठककर ठोंकते रहे और अभी छत पर एकत्र प्राणियों (जिनमें 'फेमनिन' की संख्या ही गरिष्ठ है) के भीच आकर 'ठकाठक' कई कठोर खबरें ठोंक गये – "पुनपुन के तटबंध में भी 'ब्रीच' हो गया है...इधर गंगा का पानी फिर बढ़ने लगा है...और, और सचिवालय के पास स्टीमर आ गया है और सारे कागजात को सुरक्षित ... " खिलखिलाकर हंसनेवालियों के चेहरे एक ही साथ बुझ गये-मानो बिजली गुल हो गयी-हाय राम! तब तो समझिए कि प्रलय ...

भाई साहब कल से ही जिस बात को हजार बार कह चुके हैं उसी को फिर, अपनी खल्वाट खोपड़ी पर हाथ फेरते हुए, कहते हैं – "भगवान बुद्धा ने कहा था कि इस शहर को तीन बातों से हमेशा खतरा रहेगा..."

हजार बार सुनकर भी हर प्राणी की उत्सुकता नहीं मिटती – "कौन-कौन-सी तीन चीज..?"

मैं पूछना चाहता था कि सचिवालय के पास स्टीमर आ जाने की खबर भाई साहब को कहां से मिली। वे मौर्य-युग में पहुंचे हुए थे, अतः चुपचाप नीचे अपने कमरे में चला आया।

अब सूरज की लाली बाढ़ के गंदले जल में घुल रही है। ऐसा दृश्य-अर्थात् बाढ़ के जल पर डूबते हुए सूरज की किरणों को रंगीन लकीरें खींचते बहुत बार देखा है, मैं उस अंधियारी की प्रतीक्षा में हूं –जो आज रात इस नगर में छाने-वाली है...पानी घटा नहीं है। भीड़ बढ़ गयी है। कोलाहल में कोई कमी नहीं।

...आज साढ़े सात बजे प्रसारित होने वाले प्रादेशिक समाचार नहीं प्रसारित हुआ। कव्वाली, फिल्मी गीत, तबला, वायलिन और सितार के घिसे-कटे रिकार्ड बजते रहे...प्रादेशिक समाचार नहीं प्रसारित हुआ तो क्या बिगड़ गया? प्रसारित ही होता तो क्या बन जाता? बाढ़ का पानी घट जाता ? कोई राहत मिल जाती ? ...मैंने एक बार लगातार तीन महीने तक अपने गांव में बिना अखबार पढ़कर और बिना रेडियो सुनकर अनुभव किया है। कोई फर्क नहीं पड़ता। बल्कि एक पुराना रोग (कब्जियत) दूर हो गया था...

बाहर बिजली चमकी। पूरब और दक्षिण की ओर आकाश में काले मेघ उमड़ आये हैं। उमस से देह चिपचिपा रही है। बाहर 'आवाजाही' अब तक बंद नहीं हुई है। भीड़ नहीं है। किंतु, लोग आज भी साढ़े ग्यारह बजे तक चल रहे हैं। हर आदमी के हाथ में एक लाठी-दूसरे में झोली, बोतल या डालडा का डिब्बा अथवा गठरी...सचमुच, मौत से ही जूझ रहे हैं।

पानी की धारा पर बहुत देर तक निगाहें गड़ाकर देखते रहने से एक आनंद-दायक भ्रम होने लगता है। सारा मकान स्टीमर की तरह तैरता हुआ-सा लगता है...उधर पूरब की ओर कुछ हुआ, शायद, लड़के उधर दौड़ क्यों रहे हैं, एक साथ? नाव आ रही है। हां, नाव ही है। नाव पर सात-आठ सरदारजी और कई गैर-सरदार बैठे हैं। किसी भी सिख को देखते ही मेरे मन के अंदर यह अभिवादन 'भक्तिभाव' से गूंजने लगता है – 'जो बोले सो निहाल-सत सिरी अकाल !'

सरदारजी लोगों का दल जलविहार करने नहीं, रिलीफ बांटने आया है। सामनेवाले पंचमंजिला इमारत के मुंडेर पर पनाह लेनेवालों को वे बुला रहे हैं- "नीचे आओ।"

हमारे ब्लॉक के बायें जो मकान बनकर तैयार हुए हैं, उसमें अब तक चालीस-पचास बाढ़ पीड़ित परिवार आकर डेरा डाल चुके थे-रिक्शावाले, खोंमचावाले रद्दी कागज-शीशी-बोतल खरीदने वाले। सभी रोटियां लेने उतरे। सरदार स्वयं-सेवकों ने चिल्लाकर कहा "पानी में मत उतरो। हम वहीं आ रहे हैं।"

नाव हमारे फ्लैट के नीचे से गुजरी । नीचेवाले फ्लैट से किसी ने पूछा, "क्या दे रहे हैं?"

"रोटी, सब्जी और घुघनी। और पीने का पानी भी। रोटी बहुत अच्छी है, गर्म है...बढ़िया आटे की है। क्यों, चाहिए क्या? " स्वयंसेवक सरदारजी ने एक रोटी निकालकर दिखलाते हुए कहा। फिर पूछा – "आप लोगों की छत पर पनाहगुर्जी कोई नहीं..."

इसके बाद नाव को घेरकर भूखे-प्यासे लोग अपने बाल-बच्चों के साथ रोटियां लेते रहे और शोर मचाते रहे...रिलीफ देनेवालों की यह पहली टोली थी...दिनभर के भूखे-प्यासे प्राणियों को तृप्तिपूर्वक भोजन करते हुए, घूंट-घूंटकर पानी पीते हुए देखकर रोम-रोम पुलकित हो उठा। जोर से पुकार उठा, "जो बोले सो निहाल-सत सिरी अकाल!" और – नाव पर बैठे स्वयंसेवकों ने मेरे इस हार्दिक अभिनंदन को स्वीकार करते हुए एक साथ 'सत सिरी अकाल' कहा। फिर पूछा, "कुछ चाहिए? रोटी-पाणी?"

मैंने कहा, "उधर, कम्यूनिटी हॉल...दिनकर अतिथिशाला में, और उसके पच्छिम की ओर जाइए, वहां बहुत लोग हैं...."

"हां-जी, उधर हमारी एक नाव गयी हुई है।"

...बिजली आ गयी है। जल-थल आलोकित हो गया है। पुनपुन की बाढ़ के समय, पानी की धारा पर बिजली के लट्टुओं और मर्करी-ट्यूब का जैसा आलोक-नृत्य देखा था-वैसा ही दृश्य...किंतु, सारा पश्चिमी पटना घोर अंधकार में डूबा होगा।

...दिल्ली से रेडियो पर कहा जा रहा है-पटना के लोग मौत से जूझ रहे हैं।

कमरे के कोने से ठाकुर रामकृष्ण देव बोलो- "की रे? सारा दिने...दिनभर में तीन बार ठूंसकर खाया है? दिन-भर सिगरेट फूंकता रहा, चाय पीता रहा। यही है तुम्हारा मौत से जूझना?...घर से बाहर निकलता क्यों नहीं? आश्रम के स्वयंसेवकों के साथ दुखियों की सेवा करने क्यों नहीं आता? उस बार तो खूब उत्साह के साथ गया था। क्या हुआ इस बार?"

"ठाकुर ! तुम तो जानते हो। मैंने कमस खायी है, बाढ़-पीड़ितों की सेवा करने के लिए अब नहीं जाऊंगा।"

"एई तोमार तीसरी कमस?"

लतिकाजी भींगी साड़ी में लथपथ लिपटी हुई आयीं और बाथरुम की ओर जाती बुई बोली, "ओदेर...उन्हें खिला आयी।"

मैंने कुछ भी नहीं समझा। वह स्नान करके, कपड़े बदलकर आयीं। पूछा, "ओदेर माने?"

ओई बेचारा कुकुरदेर...बेचारे कुत्ते। एक ने चायवाले की झोंपड़ी को 'आस्ताना' (बसेरा) किया है। दूसरा – वहां ईंटों की ढेरी पर है और तीसरी तीन नंबर ब्लॉक की एक खाली दुकान के रैक पर बैठा है। रोटी दे आयी हूं और, उस चायवाले को देखों। मुझे रोटी खिलाते देखकर दौड़ा आया और लाठी से बेचारे को कोंचने लगा। कहने लगा, मेरा छप्पर नोंचकर बर्बाद कर देगा।"

"भगा दिया ?"

"नहीं। अपने ब्लॉक के लड़के सब नीचे थे। उन्होंने कहा, कुत्ते को अगर भगाया तो तुम्हारी झोंपड़ी कल बह जायेगी।"

बाहर बिजली चमकी। पूरब और दक्षिण की ओर आकाश में काले मेघ उमड़ आये हैं। उमस से देह चिपचिपा रही है। बाहर 'आवाजाही' अब तक बंद नहीं हुई है। भीड़ नहीं है। किंतु, लोग आज भी साढ़े ग्यारह बजे तक चल रहे हैं। हर आदमी के

हाथ में एक लाठी-दूसरे में झोली, बोतल या डालडा का डिब्बा अथवा गठरी...सचमुच, मौत से ही जूझ रहे हैं। पानी में भंसता हुआ डेढ़ बित्ते का कोई कीड़ा डंक मार दे और एक घंटा में ही सब समाप्त ...दीवार गिर पड़े और खेल खत्म...फिर कहीं कोई तटबंध टूट जाये अथवा गंगाजी का कोप बढ़ जाये और चारों ओर पानी की एक उठती हुई ऊंची दीवार के साथ पटाक्षेप।

अब बिजली की प्रत्येक कौंध के तुरंत बाद ही मेघ गरज उठता है। इसका मतलब है कि बादल अब पटना के आकाश पर छा गया। बाहर निकलकर देखा और मुंह से सहसा निकल पड़ा – "तुम्ही क्यों बाकी रहोंगे आस्मां...जरा बाहर आकर देखो इन बादलों को ...की भीषण..."

एक कुत्ते ने रोना शुरू किया। किंतु, कल के रुदन से आज का रोना भिन्न है। कल वे आशंका और आतंक को सूंघ रहे थे और आज मौत को बहुत करीब से देखकर रो रहे हैं...मुझे फिर टेप-रिकार्डर की जरूरत ...असल में इस रुदन को जिसनें सुना है, वही समझ सकते हैं-"ओं-य-य-हूँ-ऊँ-ऊँ-ऊँ-हाँ-हाँ-हाँ-य-ह...हूँ-ओं-आ-आ..."

आज उन्हें डाँटकर कोई चुप नहीं कर रहा। इसलिए वे सम्मिलित सुर में रह-रहकर रो रहे हैं! उनकी करुण पुकार में कोई बाधा नहीं पड़ती।

....कुत्तों को चुप किया, तेज हवा के पहले झोंके ने। हवा तेज हो गयी। बिजली जल्दी-जल्दी कौंधने लगीं-कड़ककर टूटने लगी। एक बार तो लगा, आसमान चरचराकर फट ही गया। हवा नहीं, यह तूफान है। आँधी आ गयी? सभी फ्लैंटों की खुली हुई खिड़कियों और दरवाजे के पल्ले काठ के पंख की तरह फड़फड़ाने-धड़धड़ाने लगे। धड़ाधड़ खिड़कियाँ बंद होने लगीं। अब, हवा के साथ मूसलाधार वृष्टि! घनघोर वर्षा...पास ही किसी मकान में कोई भयातुर आत्मा 'अजान' देने लगी – "अल्ला-हो अ-क-ब-र..."

पुनपुन की बाढ़ को न्योतकर ले आनेवाली, अट्ठारह-बीस घंटे तक अविराम होनेवाली वर्षा की याद आयी...उस बार मुंगेर के किसी इलाके में बादल टूट कर (बर्स्ट) गिरा था और पांच मिनट में ही कई गांव पानी के अतल तल में समा गये थे...सब कुछ संभव है।

...उन लोगों पर अभी क्या बीत रही होगी जो छतों पर, खुले आसमान के नीचे हैं?

...अब जो दृश्य उपस्थित हो रहा है, होता जा रहा है, उसे देखने का साहस नहीं बटोर पा रहा हूं। विश्व-प्रकृति का यह उन्मत्त नृत्य, अब इस शहर को डुबाकर ही बंद होगा...ऊँ नमस्ते सते सर्वलोकाश्रयाय..त्वमेकं शरण्यं त्वमेकं वरण्यं...भयानां भयं भीषणं भीषणानां...परेषां परंरक्षणं-रक्षणानां...तदेकैस्मरा-मस्तेदेकंजपा...भवांभो धिपोतं शरण्यं ब्रजाम...!!!

संसार-सागर से उबारने वाले एकमात्र 'पोत' को सुमिरता हुआ, रक्षकों के भी रक्षक की शरण गहता बाहर की ओर देख रहा हूं। पानी बढ़ता जा रहा है। लेकिन, अब डर नहीं लग रहा। अब काहे का डर?...दिन में सूअर के बच्चे जिस तरह डूबते-बहते हुए मर रहे थे, उसी तरह मरने को तैयार हूं। किंतु, चिचियाऊँगा नहीं उनकी तरह। मृत्यु की वंदना गाता हुआ मरूँगा...तैंतीस-छत्तीस साल पहले का एक गीत (रवि ठाकुर के प्रसिद्ध गीत का हिंदी-अनुवाद और सुंदर अनुवाद!) – 'कंगन' फिल्म का पुराना गीत गुनगुनाने लगता हूं। फिर, बाहर की घनघोर वर्षा के ताल पर, जोर से – गला खोलकर गाना शुरू कर देता हूं- "मरण रे-ए-ए-ए तुँहु मम श्याम समा-आ-आ-न...घोर घटा का मोर-मुकुट धर धर बिजली की मुरली अधर पर ...गा दे अमृत...गा-आ-आ-आ-आ-न...मरण रे-ए-ए-ए-..."

दस मिनट बरसकर बादल छंट गये। हर फ्लैट की खिड़कियां फिर खुल गयीं। आसमान साफ हो गया...पटना एक बार फिर बच गया।
बाहर झाँककर देखा – कई लोग जाल फेंककर मछलियाँ पकड़ रहे हैं।

पंछी की लाश

वर्षा के बाद वातावरण का ताप कम हुआ। कुंतु, बिछावन पर लेटते ही बाढ़ की समृतियाँ – 'नास्टेल्जिया' की तरह लौटकर आने लगीं और मन पसीजने लगा..ऐसा क्यों होता है? इसके मूल में क्या है? ...बहुत देर तक आत्मविष्लेषण करता रहा।

बचपन से 'बाढ़' शब्द सुनते ही विगलित होने और बाढ़-पीड़ित क्षेत्रों में जाकर काम करने की अदम्य प्रवृत्ति के पीछ- 'सावन-भादों' नामक एक करुणामय गीत है, जिसे मेरी बड़ी बहिन अपनी सहेलियों के साथ सावन-भादों के महीने में गाया करती ती। आषाढ़ चढ़ते ही-ससुराल में नयी बसनेवाली बेटी को नैहर बुला लिया जाता है। मेरा अनुमान है कि सारे उत्तर बिहार में नव-विवाहिता बेटियों को 'सावन-भादों' के समय नैहर से बुलावा आ जाता है...और जिसको कोई लिवाने नहीं जाता, वह बेचारी दिन-भर वर्षा के पानी-कीचड़ में भीगती हुई गृहकार्य संपन्न करने के बाद रात-भर नैहर की याद में आँसुओं की वर्षा में भीगती रहती है। 'सावन-भादों' गीत में ऐसी ही, ससुराल में नयी बसनेवाली कन्या की करुण कहानी है :

"कासी फूटल कसामल रे दैबा
बाबा मोरा सुधियो न लेल,
बाबा भेल निरमोहिया रे दैबा
भैया के भेजियों न देल,
भैया भेल कचहरिया रे दैबा
भउजी बिसरि कइसे गेल...?"

(अब तो चारों ओर कास भी फूल गये यानी वर्षा का मौसम बीतने को है। पिछली बार तो बाबा खुद आये थे। इस बाबा ने सुधि नहीं ली। बाबा अब निर्मोही हो गये हैं। भैया को 'जमीन-जगह' के मामले में हमेशा कचहरी में रहना पड़ता है। लेकिन, मेरी प्यारी भाभी मुझे कैसे भूल गयी?)

भाभी भूली नहीं थी, उसने अपने पति को ताने देकर बुलाने के लिए भेजा। भाई अपनी बहिन को लिवाने गया...इसके बाद गीत की धुन बदल जाती है। कल तक रोनेवाली बहुरिया प्रसन्न होकर ननदों और सहेलियों से कहती है:

"हां रे सुन सखिया! सावन-भादव केर उमड़ल नदियां
भैया अइले बहिनी बोलावे ले-सुन सखिया।"

ओ ननद-सखी! सावन-भादों की नदी उमड़ी हुई है। फिर भी मेरे भैया मुझे बुलाने आये हैं। तुम जरा सासजी से पैरवी कर दो कि मुझे जल्दी विदा कर दें...सास कहती है, मैं नहीं जानती अपने ससुर से कहो। ससुर ताने देकर कहता है कि नदीवाले इलाके में बेटी की शादी के बाद दहेज में नाव क्यों नहीं दिया। अंत में, पतिदेव कुछ शर्तों के साथ विदा करने को राजी होते हैं। ससुराल की दुखिया-दुलहिन हंसी-खुशी से भाई के साथ मायके की ओर विदा होती है। लेकिन, नदी के घाट पर आकर देखा-कहीं कोई नाव नहीं। अब क्या करें! भाई ने हिम्मत से काम लिया। कास-कुश काटकर, मूँज की डोरी बनाकर और केले के पौधों के तने का एक 'बेड़ा' बनाया और उस पर सवार होकर भाई-बहिन उमड़ी हुई कोशी की धारा को पार करने लगे । किंतु, बीच नदी में पहुँचते ही लहरें तेज हो गयी। बेड़ा डगमग करने लगा। और, आखिर :

"कटि गेल कासी-कुशी छितरी गेल थम्हवा
खुलि गेल मूंज केर डोरिया-रे सुन सखिया!
...बीचहि नदिया में अइले हिलोरवा
छुटि गेलै भैया केर बहियाँ – रे सुन सखिया!
...डूभी गेलै भैया केर बेड़वा – रे सुन सखिया !!"

(नदी के उत्ताल तरंगों और घूर्णिचक्र में फंसकर बेड़ा टूट गया। भाई का हाथ छूट गया। और, भाई का बेड़ा डूब गया। भाई ने तैरकर बहिन को बचाने की चेष्टा की, किंतु, तेज धारा में असफल रहा। डूबती हुई बहिन ने अपना अंतिम संदेशा दिया-मां के नाम, बाप के नाम...फिर किसी बेटी को सावन-भादों के समय नैहर बुलाने में कभी कोई देरी नहीं करे। और, देरी हो जाये तो जामुन का पेड़ कटवाकर नाव बनवाये, और तभी लड़की को लिवाने भेजे!)

...तकिये का गिलाफ भीग गया। गीत की पंक्तियाँ मन में गूंजती रहीं और आँखे बरसती रहीं। ऐसा हमेशा हुआ है।

...और, इस गीत के साथ पिछले कई वर्षों से एक और करुण गीत-कथा की कहानी जुड़ गयी है। इसलिए, इस गीत का दर्द दूना हो गया है...'तीसरी कसम' की शूटिंग के दिनों शैलेंद्र जी मुझसे 'महुआ घटवारिन' की 'ऑरिजिनल' गीत-कथा सुनना चाहते थे ताकि उसके आधार पर गीत लिख सकें। एक दिन हम 'पबई-लेक' के किनारे एक पेड़ के नीचे जाकर बैठे। "महुआ-घटवारिन" का गीत मुझे पूरा याद नहीं था। इसलिए मैंने एक छोटी-सी भूमिका के साथ 'सावन-भादों' का गीत अपनी भौंड़ी और मोटी आवाज में, भरे गले से सुना दिया। गीत शुरू होते ही शैलेंद्र की बड़ी-बड़ी आँखें छलछला आयीं और गीत समाप्त होते-होते पूटफूटकर रोने लगे। गीत गाते समय ही मेरे मन के बांध में दरारें पड़ चुकी थीं। शैलेंद्र के आँसुओं ने उसे एकदम तोड़ दिया। हम दोनों गले लगकर रोने लगे। 'ननुआँ' (शैलेंद्र का ड्राइवर टिफिन कैरियर में घर से हमारा दोपहर का भोजन लेकर लौट चुका था। हम दोनों को इस अवस्था में देखकर वह चुपचाप एक पेड़ के पास ठिठककर बहुत देर तक खड़ा रहा...इस घटना के कई दिन बाद, शैलेंद्र के 'रिमझिम' में पहुँचा। वे तपाक से बोले – "चलिए, उस कमरे में चलें। आपको एक चीज सुनाऊँ।"

हम उनके शीतताप-नियंत्रित कमरे में गये। उन्होंने मशीन पर 'टेप' लगाया। बोले "आज ही 'टेक' हुआ है।" मैंने पूछा – 'तीसरी कसम?' बोले – "नहीं भाई ! 'तीसरी कसम' का टेक होता तो आपको नहीं ले जाता? ...यह 'बंदिनी' का है...पहले, सुनिए तो...!"

रेकार्ड शुरू हुआ- "अब के बरस भेज भैया को बाबुल सावन में लीजो बुलाय रे...अमुआँ तले फिर से झूले पड़ेगें....कसके रे जियरा छलके नयनवाँ...बैरन जवानी ने छीने खिलौने ...बाबुलजी मैं तेरे नाजों की पाली...बीते रे जुग कोई चिट्यो ना पाती, ना कोई नैहर से आये रे-ए-ए-।"

आज सुबह उठकर पंछी की लाश पर दृष्टि पड़ी तो मन इस अपशकुन से आशंकित हो गया। रात के तीसरे पहर में एक बार उठकर देखा था, मछली पकड़नेवालों के अलावा तीन चार व्यक्ति पैर से टटोल-टटोलकर कुछ खोज रहे थे। जो कुछ मिलता था उसे हाथ में एक बार लेकर देखते। अपने झोले में रख लेते या फिर पानी में फेंक देते।

कमरे में 'पबई-लेक' के किनारेवाले दृश्य से भी मर्मांतक दृश्य उपस्थित हो गया। हम दोनों हिचकियाँ ले-लेकर रो रहे थे-आँसू से तर-बतर...शैली ने (तब बांटू यानी हेमंत!) किसी काम से अथवा गीत सुनने के लिए कमरे का दरवाजा खोला और हमारी अवस्था देखकर पहले कई क्षणों तक अवाक् रहा। फिर कमरे से चुपचाप बाहर चला गया...कमरे में बार-बार वही रेकार्ड बजता रहा और न जाने कब तक बजता रहता यदि शकुनजी आकर मशीन बंद नहीं कर देतीं।

भीगे हुए तकिये पर तौलिया रखकर लेट गया। जी-भर रो लेने के बाद जी हल्का हो गया था। दृश्य पर प्रशांति छा गयी थी...मीठी नींद आ गयी।

भोर को एक सुंदर अपूर्व सपना देख रहा था। और सपने में भी आनंदातिरेक से रो रहा था...लतिकाजी ने झकझोरकर जगाया-"ऐ? ऐ की हयेछे? ...क्या हुआ?"

जगकर मन खीझ उठा...इतना सुंदर सपना बीच में ही टूट गया..मुझे क्यों जगाया...मैं नींद में रोऊँ या हँसूँ-इससे किसी का क्या बिगड़ जाता है? ...आह !

लतिकाजी बोलीं – "ऐसे में कभी-कभी आदमी का दम घुट जाता है ।"
"घुट जाता तो घुट जाता..."

...दरवाजे की कुंडी खटखटायी। जाकर दरवाजा खोला तो सामने हँसते हुए शैलेंद्र खड़े थे। उनके साथ में थे, उनके एक प्रिय-स्वजन, पटना के प्रियदर्शन डॉक्टर भोला। मैं अचरज में गूँगा हो गया। उनसे कुछ पूछना चाहता था। लेकिन, मुँह से बोली ही नहीं निकल रही थी। शैलेंद्र बोल रहे थे- "आना ही पड़ा...बेबी और गोपा के लिए योग्य 'पात्रों' को देखने के लिए। अकेला बाँटू और काका बेचारे क्या करें? ...अपनी प्यारी बेटियों के लिए मुझे आना पड़ा –ऐसे दुर्दिन में भी भला कोई आता है? ...बाबुलजी मैं तेरे नाजों की पाली, फिर क्यों हुई परायी-यह सुनकर कौन ऐसा बाप है जो..बाँटू को कबीर, दादू और रैदास पढ़ने को कहता था। पता नहीं, उसने पढ़ा या नहीं...इधर उसने एक बड़ा ही प्यारा गीत लिखा है। एल.पी. में आ गया है। सुनिए न... "

क्या सुनूँ? सपने का संसार ही समाप्त हो गया। अब जगकर, अवसन्न अवस्था में सुन रहा हूं- फतुहा से बचता हुआ – 'नात-कव्वाली-गजल-ठुमरी-सितार' का रिकार्ड!

जग गया। परंतु, सपने से इस तरह अभिभूत रहा कि बहुत देर तक 'जल-प्रलय' को भूल गया। चाय पीता हुआ बहुत देर तक सपने में अचानक आ गये शैलेंद्र के अभियोग और जलहाने-भरे शब्दों पर विचार करता रहा ...सचमुच, हम सभी कितने स्वार्थी सिद्ध हुए?

पच्छिम की खिड़की से झांककर देखा – करेंट की गति थोड़ी मंद पड़ गयी। कलवाला 'रिदम' नहीं है ...वह...वहां सफेद-सी कोई चीज 'भँसती' हुई चली आ रही है... खरगोश या विलायती चूहा या कोई चिड़ियां ? ...मुर्गी है – सफेद मुर्गी! पानी की धारा के साथ हिलकोरे खाती हुई पूरब की ओर सड़क की मुख्य खरस्रोता धारा में पहुँची और वहां से तेज रफ्तार में बहने लगी...कल पानी के साथ हवाई चप्पल, बच्चों के खिलौने, कंघी, सायकिल का बास्केट, प्लास्टिक के रंगीन कटोरे वगैरह भंसते दिखलायी पड़ते थे। आज सुबह उठकर पंछी की लाश पर दृष्टि पड़ी तो मन इस अपशकुन से आशंकित हो गया। रात के तीसरे पहर में एक बार उठकर देखा था, मछली पकड़नेवालों के अलावा तीन चार व्यक्ति पैर से टटोल-टटोलकर कुछ खोज रहे थे। जो कुछ मिलता था उसे हाथ में एक बार लेकर देखते। अपने झोले में रख लेते या फिर पानी में फेंक देते...सूअर के कई बच्चों की लाशों को लाटी की 'बहंगी' में लटकाकर भंगियों का दल आ रहा था। दल के एक युवक ने मुर्गी की लाश का पीछा किया। पानी से उठाकर डैने को खींचकर जाँचने लगा और फिर चिल्लाकर बोला-"नहीं। सड़ल न है, काठ के जैसन कड़ा हो गया है।" ..."ले ले आ, ले ले आ!!" बहंगी में लटकती हुई सूअर के बच्चों की लाशों के साथ सफेद मुर्गी भी लटकी। अब उसका मरना सार्थक हो गया। सूअर के बच्चे और मुर्गी की मृत देह अब 'लाश' नहीं – उपभोक्ता वस्तु बन गयीं ...जन्म अकारथ नहीं गया।

...दिल्ली से प्रसारित समाचार में जब यह कहा गया कि आकाशवाणी पटना के संवाददाता श्री एच.पी. शर्मा ने बाढ़ का पानी झेलकर – 'बाइपासरोड' से किसी तरह दूर जहानाबाद पहुँचकर. दिल्ली केंद्र से संपर्क स्थापित करके पटना की बाढ़ का ताजा समाचार दिया है तो ....तो....मुझे लगा कि पटना के अलावा सारे बिहार के (और भारत के अन्य भागों के) रेडियों सुननेवालों की हार्दिक शुभकामनाएँ शर्माजी ने अर्जित कर लीं...अट्ठारह-बीस घंटे से देश के अन्य भागों से छिन्नसूत्र पटना नगर का और नगर के निवासियों के मौत से जूझने का समाचार देने के लिए सहज हार्दिक शुभकामनाएं देने के सिवा और क्या दे सकते हैं, हम? ...युगयुग जियो शर्माजी...तुम्हारा कल्याण हो...बहादुर पत्रकार ! ...तुम्हारे बाल-बच्चे सुखी रहें, भगवान उनको लंबी उम्र दें!!

....देश के अन्य भागों के चिंतित लोगों की यह अशुभ आशंका दूर हो गयी होगी कि पटना, मोहनजोदड़ों की तरह, नदी के गर्भ में समा नहीं गया है...पटना, धनुष्कोटि की तरह गर्क नहीं हो गया, बचा हुआ है और वहां के लाखों लोग जीवन और मृत्यु के बीच झूल रहे हैं...मौत से जूझ रहे हैं।

आज नहानेवालों के दल में मोटर ट्यूब के अलावा कई लोग 'स्विमिंग-सूट' (तैराकी के पोशाक) में भी दिखलाई पड़ रहे हैं...अब मेरा मन कर रहा है कि छत पर जाकर 'माइक' से ऐलान करूँ-'भाइयों! भाइयों!! आप लोग कल से ही बाढ़ के गंदले पानी में नहा रहे हैं, यह आपके स्वास्थ्य के लिए खतरनाक है। फ्लू, सर्दी, बुखार, टायफायड आदि के अलावा पानी में भँसते हुए जहरीले साँप...'

अपने इस मूर्खतापूर्ण विचार पर आप ही हँसा...माइक का मोह न जायो तेरो मन से मूरख!

तमाशबीन जनता की छोटी-बड़ी टोलियों का आगमन शुरू हुआ ...एक नीमजवान 'नवसिखुआ' कैमरावाला लड़का कमर भर पानी में खड़ा होकर-पूरब मुँह से-यानी सूरज की ओर मुँह करके –तस्वीरें ले रहा है। नहानेवाले लड़के उसके सामने जाकर मुँह चिढ़ा रहे हैं। एक लड़का गले तक पानी में डूब कर अद्भुत आवाज में डूबती हुई लड़की का अभिनय करते हुए पुकारा – ब-चाओ! ...बचाओ ! मैं डूबी जा रही हूँ...." भीड़ का एक कड़ियल-जैसा आदमी कैमरावले से तैश में कुछ कह रहा है। ब्लॉक नंबर एक के छत पर खड़े लोग भी चिल्ला-चिल्लाकर कुछ कह रहे हैं। हमारे ब्लॉक के मुंडेरे से भी आवाजें कसी जाने लगीं...यहाँ लोग कल से घिरे हुए हैं, न कहीं नाव है, न रिलीफ और ये फोटो लेने वाले सिर्फ तस्वीर ले रहे हैं? ...इसी को कहते हैं कि किसी का घर जले और कोई मौज से तापे ...मत खींचने दो किसी फोटोवाले को कोई भी फोटो...इनको पैसा कमाने का यही मौका मिला है?

नहानेवालों की टोली के उत्साह में बाधा डाली – एक गाय की लाश ने। लाश फूलकर भँसती और दुर्गंध फैलाती हुई आ रही थी। मेरे कमरे की खिड़कियों से बदबू का पहला झोंका आया..ब्लीचिंग पाउडर और फिनायल की महक के साथ सड़ती हुई लाश की दुर्गंध...लगता है, किसी मुहल्ले में यह अटक गयी थी।

कैमरावाला जवान (नवसिखुआ भले ही हो) बुद्धिमान है। उसने तुरंत कैमरे का रुख तमाशबीनों की ओर कर दिया। तैश में आया हुआ कड़ियल-जैसा आदमी तुरंत ठंडा हो गया और गले में लिपटा हुआ अंगोछा ठीक कर मुँह पर हाथ फेरकर फोटो खिंचाने के पोज में खड़ा हो गया। नहानेवाले लड़कों ने वहां पहुँचकर पानी उलीचना-छींटना शुरू किया। भीड़ का दूसरा आदमी अब तैश में आकर नहानेवाले ऊधमी लड़कों को डाँटकर भगाने लगा। छाती-भर पानी में भागते हुए लड़कों में से एक, अपने ड्रम के 'बेडे' पर चढ़ गया और अपने पैंट के अग्रभाग के एक विशेष स्थान की ओर संकेत करके बोला – 'इसका फोटो लो' ...कुछ लोग हँसे। कुछ ने मुँह फेर लिया और कई लोग एक साथ –"अरे-रे-रे-रे- हरमजदवा..." कहकर चुप हो गये...छाती-भर पानी में जाने का साहस उनमें नहीं था...मुझे पांच-सात महीने पहले देखी हुई युगोस्लावी फिल्म (वी आर बिविच्ड, इरिन) के एक दृश्य की याद आ गयी। झरने में अर्द्धनग् नहानि इरिन को चारों ओर से छिपकर देखनेवाले आवारे लड़कों को जब इरिन के ससुर ने खदेड़ते हुए कहा था कि अब अगर इधर कभी देखा तो जान से मार डालूँगा... 'विल किल यू' तो भागते हुए छोकरों में से एक ने कुछ दूर जाकर, उलटकर ऐसी ही मुद्रा बनायी थी- 'किल दिस!'

फोटो लेने वाला लड़का 'डिमोरलाइज्ड' होकर कैमरा समेटकर चला गया ...मेरा कोई मित्र होता या मैं खुद होता तो इस 'पोज' को कभी 'मिस' नहीं करता।

...लेकिन कैमरावालों के प्रति लोगों का अचानक यह आक्रोश क्यों?/यह तो अच्छी बात नहीं। अपने कई प्रेस-फोटोग्राफर मित्रों तथा अन्य गैरपेशेवर फोटोग्राफर दोस्तों की याद आयी...जनार्दन ठाकुर, सत्यनारायण दूसरे, सूर्य-नारायण चौधरी, वासुदेव शाह, सत्यदेव नारायण सिन्हा (आर.एस.चोपड़ा तो बंबई जा बसे) तथा गुरु उप्पल के अलावा बहुत संभव है, बाहर के जाने-माने छायाकार आये हों। पता नहीं, उनके साथ क्या-क्या व्यवहार करें ये?"

मैं अब अपनी छत पर 'चचागीरी' करने के लिए पहुँचा। मेरे ब्लॉक के लड़के मेरे नाम के साथ 'चचा' जोड़कर मुझे संबोधित करते हैं। छत पर जो भी 'भतीजे' मौजूद मिले, उन्हें मैंने समझाया कि किसी फोटो लेनेवाले को 'हूट' न किया जाये। वे तुरंत समझ गये – "अच्छा चचाजी! हम लोग नीचे जाकर इन लड़कों को समझा देते हैं..."

नहानेवालों की टोली के उत्साह में बाधा डाली – एक गाय की लाश ने। लाश फूलकर भँसती और दुर्गंध फैलाती हुई आ रही थी। मेरे कमरे की खिड़कियों से बदबू का पहला झोंका आया..ब्लीचिंग पाउडर और फिनायल की महक के साथ सड़ती हुई लाश की दुर्गंध...लगता है, किसी मुहल्ले में यह अटक गयी थी। और, वहां इस पर प्रचुर मात्रा में ब्लीचिंग पाउडर और फिनायल डाला गया था...असह्य दुर्गंध! कहीं हमारे ब्लॉक के नीचे किसी दुकान में न अटक जाये । फिर तो सांस लेना भी मुश्किल हो जायेगा। जीना दूभर हो जायेगा !...नहीं, अब तक धीरे-धीरे बहती हुई आती लाश, सड़क की मुख्य धारा के पास जाते ही – एक बार नाचकर – तेज धारा के साथ हो गयी और फिर उसकी गति काफी तेज हो गयी।

"एई जा! ...गैस फुरुलो-गैस समाप्त ! मैंने कहा था न?" रसोईघर से बाहर निकलती हुई लतिकाजी बोलीं! फिर चुपचाप कोयलेवाला चूल्हा सुलगाने की तैयारी करने लगीं।

मैं पूरब बरामदे पर खड़ा रहा...वह आ रहे हैं, डॉक्टर शिवनारायण, हाथ में बड़ी-सी लाठी लेकर टेकते हुए, अस्पताल जा रहे हैं...कल रात में क्या यही सितार बजा रहे थे? पूछूँ? ...नहीं, अभी तो यह डॉक्टर हैं। सितारवादक नहीं।

...कमर से धोती लपेटे, गंजी पहने – लाटी टेकते और मुस्कुराते एक परिचित मुखड़े पर दृष्टि पड़ी – ओ परेसजी हैं। 'रूपरंग' नाट्य-संस्था के निदेशक-लेखक अभिनेता ...परेसजी मेरे ही ब्लॉक की ओर आ रहे हैं? मेरे फ्लैट के नीचे आकर बोले – "अरे ! यहां तो बहुत तेज करेंट है। लगता है, उठा-कर फेंक देगा।" उन्होंने पूछा "सिगरेट है न?...और किसी चीज की जरूरत? जी नहीं, हम लोगों का क्वार्टर ऊंची जगह पर है। पानी नहीं है...मित्रों की खोज-खबर लेने निकला हूँ।"

मैंने कहा – "इधर कहीं किरासन तेल मिलेगा? हम लोगों की 'गैस' अभी-अभी खत्म हुई है..स्टोव के लिए किरासन चाहिए। यदि उधर..."

"अच्छी बात! देखते हैं?"- परेसजी नीचे से ही चले गये।

लतिका मुजे झिड़की देती हुई बोली – "तुम भी कैसे हो ? बेचारा हाल-समाचार पूछने आया था और तुमने किरासन तेल की फरमाइश कर दी। लज्या नेई तोमार एकटू?"

"लाज की क्या बात है इसमें ? मित्र हैं। बाढ़ से पीड़ित नहीं हैं! हाल-समाचार पूछने आये थे...इनसे सहायता मांगने में क्या लाज?"

दिल्ली से प्रसारित समाचार में कहा जा रहा है कि सेना के जवान लोगों को सुरक्षित स्थानों में पहुँचा रहे है! हेलिकॉप्टरों से खाद्य सामग्रियाँ गिरायी जा रही हैं!...केंद्रीय खाद्य-मंत्री ने हवाई सर्वेक्षण के बाद वक्तव्य दिया है...

दिल्ली के समाचार के बाद, पटना के फतुहा 'कैंप-केंद्र' से एक आवश्यक सूचना प्रसारित की जा रही है, आज किसी पेशेवर अनाउंसर की आवाज है – भीषण बाढ़ के कारण, पटना नगर में पानी आपूर्ति में बाधा पड़ गयी है, अतः पेयजल का भीषण अभाव हो गया है...नागरिकों से अनुरोध है कि वे किसी भी प्रकार के पानी को पंद्रह मिनट तक उबालने के बाद काम में ला सकते हैं...

किसी भी तरह के पानी का मतलब हुआ कि बाढ़ के पानी को भी पंद्रह मिनट तक उबालकर (छानकर नहीं?) पी सकते हैं?... मैंने अपने कमरे के पोने में बैठे हुए देवता से कहा –"अब इस शहर के सभी नागरिक 'परमहंस' हो जायेंगे तुमने कहा है न – जिस दिन नाली के गंदे पानी और गंगाजल में कोई भेद नहीं मानोगे...लेकिन, मैं परमहंस नहीं होना चाहता। दया करके मेरे 'टैप' को 'ठप्प' मत करना।"

'घायल' आ रहा है। नरेंद्र घायल। मैंने इसका नाम दिया है – स्वामी मुश्किल आसानानंद। पुनपुन की बाढ़ के समय भी सबसे पहले 'घायल' ही पहुँचा था। बीमारी के समय, अस्पताल में लगातार तीन महीने तक सेवा करता रहा। मैं तो, उसके जिला-जवार, गांव-घर का भैया ही हूँ- किंतु पटना के किसी भी दुखी और बीमार साहित्यसेवी की सेवा और सहायता के लिए वह सदा तत्पर रहता है – चाहे वह पंडित शिवचंद्र शर्मा हों या कोई अज्ञात कुलशील नया लेखक ...आते ही उसने पूछा – "भाभी ! लगता है, आपका गैस खत्म हो गया है। नाला रोड में पानी भरा हुआ है और गैस कंपनी भी डूबा हुआ है..."

मैंने कहा-"अगर किरासन तेल की कोई व्यवस्था कर सको..."

"व्यवस्था क्या, ले ही आता हूँ।" वह उठ खड़ा हुआ। लतिकाजी ने रोकते हुए कहा – "अरे, कहाँ जाते हो? अभी तो चूल्हा सुलगा लिया है। चाय पी लो।"

मैंने कहा- "उस दिन फ्रेजर रोड पहुँच नहीं सका। डबल रोटी नहीं ला सका । डी. लाल की दुकान डूब चुकी थी। कार कंपनी भी..."

"आ जायेगी रोटी भी। अशोक राजपथ पर मिल जायेगी।"
"अब तुम लगे न फरमाइशी..."
"और आपकी सिगरेट का क्या पोजिशन है?"

"सिगरेट तो है। लेकिन, इथुआ मार्केट खुला हुआ हो तो विश्वनाथ की दुकान से मगही पान..."

लतिकाजी अब सचमुच क्रुद्ध हो गयीं-"और, चार बोतल कोका-कोला? नहीं घायल। कुछ भी नहीं लाना है...ऐसे दुर्दिन में आदमी को अपनी जरूरत कम करनी चाहिए और इनकी फैहरिस्त लंबी होती जा रही है।"

जनाब सत्यनारायन दूसरे साहब कंधे से झोला-झब्बा लटकाये आये-घुटने तक पैंट समेटे। मैंने पहला सवाल किया-
"स्टुडियो कितने पानी में है?"
"कमर-भर।"

"फोटो लेते समय लोग गालियाँ तो नहीं देते, यानी 'हूट-ऊट' तो नहीं करते?"

"यह आपको कैसे मालूम हुआ? कुछ अजीब हालत है, इस बार ...पत्रकार और फोटोग्राफर को लोग नाव पर चढ़ाना भी नहीं चाहते...मैंने तो पच्छिम पटना करीब-करीब कवर कर लिया है।"

"कहीं, शारदेय पर नजर पड़ी ?"
"दो दिन पहले 'संगी होटल' में थे-ऐसा मालूम हुआ है...वह बंबई चला गया होगा।"

"बोटानिकल गार्डेन के पशु-पक्षियों का क्या हाल है?"
"पोल्ट्रीफार्म तो एकदम साफ है...बोटानिकल गार्डेन के भी कई जानवर बह गये हैं। कुछ डूब भी गये होंगे।"

दूसरे ओर घायल चाय पीकर चले गये। मैं फिर कुदरत का जलवा देखने के लिए खिड़की के पास हो गया..अब वह किसी मृत प्राणी की लाश आ रही है? बहकर आनेवाली कोई भी छोटी-बड़ी चीज हमारे ब्लॉक के पिछवाड़े में आकर मंद गति से इधर-उधर थोड़ा चक्कर काटती है। हमारे ब्लॉक की अर्द्धवृत्ताकार इमारत के पास आकर, हर फ्लैट के नीचे से गुजरती हुई, सड़क की ओर जाकर तेज धारा के साथ हो जाती है। शायद, बछड़ा है। नहीं। यह अलसेसियन कुत्ता है। दोनों कान शान से

खड़े हैं? रौब में कहीं कोई कमी नहीं। कान से पूंछ तक इसकी मुद्रा और तेवर देखकर ही समझ लेता हूँ- इसने बहादुरी से मौत को वरण किया है। मौत की छाया पर झपट्टे मारकर लड़ता हुआ मरा है।

...बाढ़ पीड़ित ग्रामीण क्षेत्रों में मृत पशुओं की – गाय, बैल, घोड़े, बकरी आदि की –लाशें बहुत बार देख चुका हूँ...अलसेसियन कुत्ते की लाश, शहर की बाढ़ का प्रतीक, पहली बार देख रहा हूं।

बाहर शोर हुआ-कुम्हरार में भी पानी घुस गया। कुम्हरार और कंकड़-बाग में आज पानी घुसा है।

...अब प्राचीन पाटलिपुत्र (अशोक के पाटलिपुत्र) को घरती के नीचे से खोदकर उद्धार करेंगे या आधुनिक पटना को भूगर्भ में जाने से बचायेंगें?

अब इधर-उधर-बाहर, भीतर कुछ भी देखने का मन नहीं करता। क्या करूँ। कुछ पढ़ने की चेष्टा की जाये ...विश्वकवि की शरण गहूँ।

निबंधमाला-द्वितीय कंड। पृष्ठ उलटाया और पढ़ना शुरू किया तो अचरज के मारे बहुत देर तक चुपचाप कमरे के कोने में बैठे ठाकुर को देखता रहा ...यह कैसा संयोग? पृष्ठ उलटाया और यहाँ भी बाढ़ का प्रसंग? ...यह क्या संपूर्ण 'काकतालीय' – संयोग है? ...और रवींद्रनाथ ठाकुर की भी पंछी की लाश पर ही दृष्टि पड़ी थी?

पढ़ना शुरू करता हूँ- 'शिलाइदह, 9 अगस्त, 1894 ...नदी एके बारे कानाय भरे गेछे। ओ पारटा प्राय देखा जाय ना...आज देखते पेलूम, छोटो एकटि मृत पाखी स्रोते भेसे आसछे...और मृत्युर इतिहास बेस बोझा जाच्छे... किसी, एक गांव के बाहर बाग में, आम की डाली पर उसका बासा' (घोंसला) रहा होगा। सांझ को 'बासा' में लौटकर संगी-साथियों के नरम-नरम गर्म डैनों के साथ अपना पंख मिलाकर श्रांत देह सो रहा होगा...हठात् पद्मा ने जरा करवट ली और पेड़ के नीचे की मिट्टी अररा कर धँस गयी। नीड़च्युत पंछी ने हठात् एक मुहूर्त के लिए जगकर 'चें' किया, इसके बाद फिर उसको जगना नहीं पड़ा। मैं जब मफस्वल में रहता हूं-रहस्यमयी प्रकृति के पास, अपने साथ अन्य जीव का प्रभेद अकिंचित्कर उपलब्धि करता हूँ। शहर में 'मनुष्य-समाज' अत्यंत प्रधान हो जाता है। वहां वे निष्ठुर रूप से अपने सुख-दुख के सामने अन्य किसी प्राणी के सुख-दुख की गिनती ही नहीं करते ...एक पंछी के सुकोमल पंखों से आवृत स्पंदमान क्षुद्र वक्ष के अंदर जीवन का आनंद कितना प्रबल है, जिसे मैं अचेतन भाव से...भूले थाकते पारि ने...

कलाकारों की रिलीफ पार्टी

आज सुबह सुबह से ही ‘ अपने लोग’ स्वजन-सनेही, मित्र और प्रतिभाजन-जन-हमारी सुधि लेने आ रहे हैं। कोई खाली हाथ नहीं आता। एक हाथ में लट्ठ और दूसरे में हमरे लिए कोई-न-कोई आवश्यक सामान...सभी एक अभूतपूर्व ‘मेकअप’ में – लूंगी या धोती लपेटे, गंजी पहने, डाक्टर रामवचन राय आये, तो उनके हाथ में जो लाठी थी वह उनसे भी वजनी रही होगी। मैंने हंसकर कहा था—“आचार्यजी, लाठी में गुण बहुत है, सदा राखिये संग। नदि-नाला...”

परेसजी आये, हाथ में बोतल लेकर – “बहुत मुश्किल से एक बोतल “ऊपर” किया है। आज-भर तो काम चल जायेगा न...?”

बोतल पर ‘ब्लैकनाइट’ का लेबुल ...हालांकि काफी मटमैला और बदरंग था। लतिकाजी आतंकित स्वर में बोलीं- “यह ...क्यों...फिर...फिर...”

“जी, किरासन तेल!”

एक क्षण पहले ही जिनको मेरा कोई महामध्यप और ‘माताल’ मित्र समझकर दरवाजे पर से ही विदा करने को सोच रही थीं लज्जित और पुलकित होकर उन्हें धन्यवाद देने लगीं-“अंदर आइए न...भीगकर आये हैं। चाय पी लीजिए।”

अभी टेलीफोन लाइन ठीक रहती तो कहीं से जाकर सीधे अपने पुराने मित्र सरदार चंद्रमोलेस्वर सिंह को इन संवादों के साथ बधाई दे देता...चंद्रमौलेश्वर नाम सिक्ख नामावलि में असाधारण, ‘अनकॉमन’ और अजनवी भले ही हो- सरदार चंद्रमौलेश्वर श्री पटणासाहब गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के जनरल सेकेटरी हैं।

मैंने लतिकाजी से एकांत में अनुनय किया- “तुम दया करके इनसे यह मत पूछा करो कि दाम कितना लगा। आर्टिस्ट लोग हैं, छोटी-सी बात से ही ठेस लग जाती है इन्हें।”

अभी कुछ देर पहले डॉक्टर रामवचन राय एक बड़े झोले में हरी और टटकी सब्जियाँ भरकर ले आये – झिंगुनी, रामतोरई, करेला, परवल, फ्रेंचबीन, हरी मिर्च और चार दूधिया – नाजुक मकई के बाल...

लतिकाजी ने औपचारिकतापूर्ण बातों के साथ ही पूछ लिया – “तीन-चार किलों तो जरूर होगा – सब मिलाकर। इतना ढेर क्यों ले आये? ...कितना दाम...?”

मैंने बात को बीच में काटते हुए रामवचनजी से कहा-“असल दिक्कत किरासन तेल की है।”

‘तोमार बस एकई कथा-किरासन तेल। नहीं, रामवचनजी, आप किरासन तेल मत लाइएगा। मैं भी अभी निकलूँगी, ले आऊँगी...देखिए न, आज सुबह से जो भी आते हैं सबसे बस किरासन तेल की दिक्कत ...मैं तो डरी कि कहीं अपने नये ‘जमाय’ और ‘कुटुंब’ को भी किरासन तेल की दिक्कत सुनाकर फरमाइस न कर बैठें।’

परेसजी बैठे ही थे कि डाक्टर रामवचन राय ‘डालडा’ के नये डिब्बे में किरासन तेल लेकर लौटे। इसके तुरंत बाद ही श्रीमान घायल एक किरासन तेल वेंडर को ही गाड़ी के साथ लेकर प्रकट हुए – “लीजिए, कितना तेल लीजिएगा।” घायल के हाथ में ‘फैरेजनी’ की दो डबल रोटियाँ थीं- “अशोक राजपक्ष पर एक दुकान में मिल गयीं...”

मित्रों के जाने के बाद लतिकाजी की बेकार की बहस को मैंने समाप्त करने की चेष्टा की-“देखिए मैं, यानी पटना का एक लेखक, अर्थात् कलाकार, बाढ़ से घिरा हुआ हूं..एरा आमार जातेर लोक,...ये हमारी बिरादरी के लोग हैं – लेखक, कवि, पत्रकार, कथाकार, आर्टिस्ट, अभिनेता-मेरी सुधि लेने आते हैं और मेरे लिए ‘रिलीफ’ ले आते हैं। मुझे जिस चीज की जरूरत

होती है उनसे बेझिझक कह देता हूँ...अपने को धन्य मानकर, उनके लाये हुए 'सौगात' को प्रसाद से भी अधिक पवित्र समझकर, निर्विकार चित्त से उपभोग करता हूँ। इसमें लाज-शर्म की बात अथवा 'जग/हंसाई' कहां है?...हां, बेटी ससुराल से आये हुए फल तथा अन्न की आप निश्चय ही अलग रख दीजिए।"

सरदारों की रिलीफ टोली आज दोपहर में भी रोटी-पानी बांट गयी है। आसपास के मकानों में बसेरा लिये हुए लोग-गर्म-गर्म रोटियां खाते हुए बतिया रहे हैं- ""
पूरी से भी ज्यादा स्वाद है इस रोटी में...कितना प्रेम से 'बांट-बखर' करते हैं; न किसी को कम, न किसी को ज्यादा ...बोल रहे थे कि सांझ को भी 'लंगर' आयेगा, घबराना मत...ई 'लंगर' का है हो? ..."हँ हँ हँ – लंगर नहीं समझा – यही जो खा रहे हो।"

अभी टेलीफोन लाइन ठीक रहती तो कहीं से जाकर सीधे अपने पुराने मित्र सरदार चंद्रमोलेस्वर सिंह को इन संवादों के साथ बधाई दे देता...चंद्रमौलेश्वर नाम सिक्ख नामावलि में असाधारण, 'अनकॉमन' और अजनवी भले ही हो- सरदार चंद्रमौलेश्वर श्री पटणासाहब गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के जनरल सेकेटरी हैं। पंजाबी सिक्ख नहीं, पूर्णियाँ के सिक्ख हैं। इसलिए इतना मनोहर नाम है। हाँ, हमारे जिला में पंद्रह-बीस टोलों के ऐसे-ऐसे बड़े गाँव भी हैं जहाँ अचानक पहुँचकर किसी को भ्रम हो सकता है कि हरियाणा अथवा पंजाब के किसी इलाके में आ गया है...ढोर चराते हुए सिक्ख, खेत गोंडते हुए सिक्ख, बैलगाड़ी पर सरदार घोड़े पर-इधर-उधर हर तरफ छोटी-बड़ी, रंग-बिरंगी (और बदरंगी भी) पगड़ियोंवाले – छोटे-बड़े सरदार ...गुरु तेगबहादुर ने असम जाते समय यहां गंगा पार कर डेरा डाला था और यहां के लोगों के भीच 'सतसंग' करके धर्मप्रचार किया था। पांच धर्मप्रचारकों को वह छोड़कर गये थे। अब तो इस इलाके में दो गुरुद्वारे हैं – उचला में, लक्ष्मीपुर में। बोली, पूर्णियाँ के गाँव की ही बोलते हैं...हमारे मित्र सरदार श्री चंद्रमौलेश्वर इसी इलाके के एक बड़े गांव 'उजला' के निवासी हैं तथा तेगबहादुर द्वारा रखे गये पांच धर्मप्रचारकों में से एक के वंशज हैं। इसलिए गुरुद्वारा पटना साहब की ओर से बंटनेवाली 'रिलीफ' का थोड़ा श्रेय स्वयं लेता हुआ मैं कहता हूं- "यह भी समझो कि ...हमारे पूर्णियां के 'परताप' से ही..."

शाम को एक नया दल आया। एक मुहल्ले के की प्रवासी बंगाली-बिहारी गायक, वादक, लेखक, गीतकार, कवियों ने मिलकर मुहल्ले के घर-घर से 'मुठिया' जमा किया। एक नाव किराये पर ले आये। अपने हाथों से रोटियाँ बेलकर सेंककर, सब्जी पकाकर बड़े-गड़े 'देग' में ले आये हैं। दूध के चूरे और दवाइयाँ भी हैं...नाव पर खड़े एक युवक की सूरत अतिपरिचित-सी लग रही थी। वह भी मुझे उसी दृष्टि से देख रहा था और मेरी ही तरह भटक रहा था। मैंने पुकारा – "आलोक ? आलोधन्वा?" वह हँसा। नाव से नीचे उतरकर हमारे फ्लैट के नीचे आया। उसने दाढ़ी मुड़ा ली है और मेरी दाढ़ी बढ़ गयी है, इसलिए...

मैंने फिर लतिका को छेड़ा – "बाहर आकर देखिए, हमारे तरुण कलाकारों का रिलीफ पार्टी।"

तरुण कलाकारों की नाव रोटी, सब्जी, दूध, दवा बांटती हुई चली गयी। मैं बहुत देर तक चुपचाप न जाने क्या सब सोचता रहा कि मन फिर कातर होने लगा। किंतु अपनी कसम की याद करके तुरंत 'चंगा' हो गया।

लतिका देवी अपने सगे, संबंधियों और छात्राओं का हाल-समाचार जानने के लिए निकल पड़ी हैं। मुझसे इस बार इस औपचारिकता का निर्वाह भी नहीं हो सकेगा-मुझे इसका खेद है।

इन दिनों छत पर पहुँचने का अर्थ है 'गांधी मैदान' पहुँचा जाना; मतलब छत पर पहुँचते ही अपार जनता के बीच पहुँच जाना-सा हो जाता है। पहुँचते ही चारों ओर से प्रत्येक फ्लैट के निवासियों द्वारा संचित, संग्रहीत तथा संपादित समाचार मिलने लग जाते हैं...इंडस्ट्रियल स्टेट में दरवाजा नहीं खुल सकने के कारण एक पूरा परिवार ही ..किदवईपुरी में एक स्कूटर पर स्वामी-स्त्री और बच्चे की लाशें-स्वामी स्कूटर का हैंडिल एकदम 'टाइट' होकर पकड़े हुए था...एक लकड़ी के बक्से में दो

बच्चे मिले। एक मर चुका था। बक्से के अंदर एक चिट्ठी थी.. 'हम लोग पानी से घिरे हैं। अगर आप लोगों में से किसी को यह बक्सा मिले..' 'अरे साहब, तटबंध को तो 'फलाना' ने उड़ा दिया है- वीमेंस कालेज में क्या हुआ सो मालूम है?'

अब मैं ऐसी बातों से नहीं चिढ़ता। मुझे इन लोगों से अब सहानुभूति होने लगी है। बेचारे चारों ओर से पानी से घिरे हुए लोग। छत पर आकर कुछ सुन-सुनाकर अपनी 'बोरियत' को दूर कर लेते हैं...संभव है ऐसी विपदा की घड़ी में आदमी तोड़ा बेमतलब और बेसिर-पैर की 'नानसेंस' बोलकर कुछ राहत हासिल करता हो।

किंतु, आज पहुंचते ही एक मतलब की बात की – बोरिंग रोड की ओर से किसी फ्लेट में आकर टिके हुए एक पटनियाँ-बंगाली नौजवान ने। बोला – "हमलोग अगस्त से लेकर अक्तूबर तक किसी भी स्थानीय समाचारपत्र के दो-तीन कालम को कभी नहीं पढ़ते थे- उत्तर बिहार की बाढ़ के समाचारों के कारण। हर वर्ष नियमपूर्वक आनेवाली हर बाढ़ को पिछले साल की बाढ़ से बढ़कर बताया जाता। किसी तटबंध का टूट जाना और फसल के साथ जान– माल की बर्बादी के समाचारों के कोई प्रभाव हम पर नहीं पड़ते थे। इसीलिए इस बार ऐसा लगता है कि ..हे मोर अभागा देश, जादेर कोरेछो अपमान हते हबे तादेर समान..."

उस युवक को इस तरह आवेश में आकर आवेगपूर्ण आवृत्ति करते सुनकर उसकी फूफी या मौसी ने पुकारकर कहा था – "खोकन, की सब जा-ता देश-देश निये जादेर –तादेर संगे तुई 'आबोल-ताबोल' बले बेड़ाच्छिस?..नीचे चल!"

मन में हुआ कि टोकूं – "की दीदी?...आपनि रवि ठाकुरेर कविता के आबोल-ताबोल बलछेन?" किंतु फिर समझा कि वह 'भद्रमहिला' शायद ठीक ही कह रही है।

इंप्रूवमेंट ट्रस्ट के नये मकान की छत पर बाढ़पीड़ितों के कई परिवार एकत्रित होकर वार्तालाप कर रहे हैं। ऐसी ही खबरें वहाँ भी प्रसारित-प्रचारित हो रही हैं...कमला-बलान नदियों के इलाके में रहनेवाले एक व्यक्ति ने कहा- "जे दुखे छोड़लहु घोराघाट, से दुख लागले रहल साथ...जिस दुख के कारण घोराघाट छोड़ा, वह दुख साथ लगा ही रहा। कमला-बलान ने गांव उजाड़ दिया तो भागकर पटना आये। पटना आये तो-ले बलैया! पटना में भी वही हाल!"

उसके साथी ने कहा – "पटना में भी वही हाल कैसे? वहाँ, अपने गांव में, बाढ़ के समय रहने को तिमंजिला मकान मिलता था! एँ! बोलो! ऐसन नरम नरम, गर्म-गरम रोटी और रसादार तरकारी वहाँ मिलता था? ए? बोलो?"

"अयँ हो, रेडियों में तो बोलिस है कि होली-कफ्टर से बनल-बनाबल, पकल-पकाबल खाना गिराबल जाता है। मृदा इधर कहाँ गिराइस है एको दिन? अयँ हो..?"

"सुनते हैं जी? सरदारजी लोग के 'लंगर' में अभी जो पियाज की चटनी दिया था ऐसा स्वाद था कि क्या बतावें। कि सच्चो कहते हैं – टोकरियो-भर रोटी हम उत्ती-सी चटनी से खा जाते!"

"धेत्त मर्दे! टोकरी –भर रोटी खाने का मिजाल है तुम्हारा?"

शाम को साढ़े सात बजे पटना उर्फ फतुहा कैंप-केंद्र ट्यून किया – "अब आप रामरेणु गुप्त से समाचार सुनिए...!"

तो आज न्यू एडिटर श्री एस.एन. मिश्रा सदलबल फतुहा कैंप-केंद्र पहुँच गये हैं?...रात में दो विशेष प्रसारण की विशेष सूचनाएं प्रसारित की गयी हैं।

लतिकाजी रात के साढ़े आठ बजे लौट आयीं, तो उधर से जितनी खबरें लेकर लौटी थीं उनमें से प्रायः सभी समाचार कुछ हेर-फेर के साथ मैं अपनी छत पर ही सुन चुका था।

...पानी में 'क्लोरिन' की मात्रा इतनी बढ़ा दी गयी है कि चाय, कॉफी, रोटी, दाल, सबमें बस एक ही स्वाद। कहते हैं क्लोरिन का दांत के 'एनामेल' पर बुरा असर होता है।

...कल रात को काले भयावने बादलों को देखकर मुँह से सहसा निकला था और मैंने सिगरेट की डब्बी पर लिख दिया था- 'तुम्ही क्यों बाकी रहोगे आस्मां!' आज उसके नीचे दूसरी पंक्ति लिखकर प्रसन्न हुआ। ... तुम्ही क्यों बाकी रहोगे आस्मां! कहर बरसाकर शहर पर देख लो! कहर 'बरसा' कर या 'बरपा कर? नहीं, बरसाकर ही ठीक है!...किंतु मुझे संदेह है कि ये पंक्तियां मेरी नहीं किसी और शायर की है...दुष्यंत को लिखकर पूछूँ । बहुत देर तक दुष्यंत की एक गजल की कई पंक्तियों को मन ही मन दुहराया। फिर शमशेर के शेर की इन दो पंक्तियों को तरन्नुम के साथ गुनगुनाता रहा- "जहाँ में अब तो जितने रोज अपना जीना होना है। तुम्हारी चोटें होनी हैं, हमारा सीना होना हैं। जहाँ में अब तो जितने रोज..."

शायद क्लोरीन में अन्य गुण-अवगुण के अलावा शीघ्र सुलाने की भी थोड़ी शक्ति होती है। बिछावन पर लेटा और संभवतः दस मिनट के बाद ही गहरी नींद आ गयी।

सुबह साढ़े छह बजे छत पर दौड़-धूप और आपाधापी से नींच खुली...आकाश में एक साथ कई विमानों की सम्मिलित भनभनाहट ...हाँ ! हाँ ! लगता है इसी में है। इसी में..? इंडियन एयरफोर्स का प्लेन है न? तब इसी में हैं!...

उठकर खिड़की पर गया। आज अभी भीड़ कम है। बाहर, भीतर सभी लोग आस्मान की ओर आंकें उठाकर देख रहे हैं। 'एहि में हौ...एहि में हौ? एहि में...बीचवाला में...हमको तो आवाज से ही पता लग गया कि यही प्लेन है।'

आज पानी घटा है। अविराम बहती हुई धारा की गति और भी मंद हुई है। बाढ़ के जल में अब एक विचित्र-सी महक आ गयी है...आज भी नहाने-वाला नहीं, कहीं भी। पानी में नहाते हुए ऊधमी लड़कों ने कई दिनों से जी को काफी कुढ़ाया था।

आकाशवाणी से प्रसारित प्रत्येक बुलेटिन में कल से ही कहा जा रहा है कि सेना के विमान और हैलिकॉप्टरों के द्वारा बाढ़ में फंसे हुए लोगों को सुरक्षित स्थानों में भेजा जा रहा है और पके-पकाये भोजन के पैकेट गिराये जा रहे हैं! अतः हवाई जहाज की आवाज सुनते ही सभी की आँखें आकाश की ओर टँग जाती हैं...कहाँ गिराया कुछ?

दरवाजे की कुंडी खड़की..सुबह साढ़े सात बजे ही पानी हेलकर सुधि लेने कौन 'उदार बंधु' आ गये? बिछावन छोड़ना ही पड़ा..पास-पड़ोस के ब्लॉक के दो-तीन सज्जन। उनका अधेड़ अगुआ आगे बढ़कर बोला – "आपको थोड़ा कष्ट दिया। माफ किया जाये। देखिए, तीन दिन हो गये। अब तक हम लोगों के चारों ब्लॉक में एक भी नाव नहीं मिली। सुना है कि 'कलेक्टेरियट' में 'ज्वायंटली' जाकर कहने से नाव मिलती है। तो सोचा कि आपको ही अगुआ बनाकर ले चलें। आपके रहते फिर..."

"मुझे ? अरे...मेरे लिए तो...मुश्किल है ...मैं तो इतना लाचार हो गया हूं...कि," मैं हकलाने लगा।

"क्यों-क्यों? बीमार-उमार हैं क्या ?"

"मेरा चेहरा देखकर आप कुछ नहीं समझ सके?"
"हां, हां। इधर थोड़ा कमजोर लग रहे हैं। तो क्या तकलीफ है?"

साथ में आये हुए नौजवान को मालूम था कि मैं पेप्टिक अलसर का मरीज हूँ। उसने कहा "पेप्टिक अलसर है तो ऑपरेशन क्यों नहीं करवा लेते?"

"ऑपरेशन नहीं। इसको इंडियन मेडिकल इंस्टिट्यूट – दिल्ली में डाक्टर आत्मप्रकाश के द्वारा 'फ्रीज' करवाना है।"

"यह फ्रीज क्या होता है?"

“होता है....”
“माफ किया जाये । आपको कष्ट दिया।”

“साला, मिथ्येवादी, बेईमान जोच्चोर...झूठा। भाग यहां से।” कमरे के कोने से मुझ पर दनादन गालियाँ दागी गयीं। ऐसी गालियाँ सुनकर मन प्रसन्न हो जाता है..तो ठाकुर प्रसन्न है।

“तुम तो जानते हो ठाकुर, मैंने एक शब्द भी झूठ नहीं कहा। मैंने यह भी नहीं कहा कि पेप्टिक अलसर के कारण उनके साथ जाने में असमर्थ हूं..अब तुम्हीं बताओ न, नाव लेकर मैं क्या करता, अथवा वे ही क्या करेंगे? उधर सारा पच्छिमी पटना अगम पानी में है – आप छाती-भर पानी में ही हैं। कहीं डुबाव पानी तो है नहीं। कहीं से एक नाव मिल भी गयी तो रोज आपस में ही सिर-फुटौवल...”

सुबह आठ बजे का समाचार सुनकर ही समझा कि लोग आज सुबह साढ़े छः बजे आकाश की ओर हवाई जहाज को क्यों देख रहे थे। केंद्रीय खाद्यमंत्री के बाद स्वयं प्रधानमंत्री हवाई सर्वेक्षण करने के लिये (आयी थीं) आये थे।

आज पानी घटा है। अविराम बहती हुई धारा की गति और भी मंद हुई है। बाढ़ के जल में अब एक विचित्र-सी महक आ गयी है...आज भी नहाने-वाला नहीं, कहीं भी। पानी में नहाते हुए ऊधमी लड़कों ने कई दिनों से जी को काफी कुढ़ाया था। आज वे नहीं है, तो लगता है कहीं जिंदगी है ही नहीं...जलप्रलय में भी वे जलकेलि करते रहे। रोग के कीड़ों की परवाह किये बिना, राजेंद्रनगर गोलंबर के गोल पार्क के चारों ओर ‘तेज गति से चलकर मारनेवाली’ जिस अभूतपूर्व ‘नयी नदी’ में नहानेवाले लड़के सब आज कहां चले गये?

एक नाव से मेडिकल स्वयंसेवकों की टोली एलान कर रही है। -“भाइयों! बाढ़ के कारण पटना नगर में तरह-तरह के संक्रामक रोगों के फैलने की आशंका है। आपके दरवाजे पर हमारे स्वयंसेवक टीका लगाने पहुँच रहे है। कृपया, फौरन टायफायड तथा हैजे का टीका ले लें।”

एलान सुनकर मन में तुरंत सवाल उठा- ‘इतनी दवाइयाँ अभी मौजूद होंगी? अथवा ...बाहर से आनेवाली दवाओं के समाचार के आधार पर...?’

रेडियो से बिहार के बाढ़पीड़ितों के लिए ‘दान’ मिलने के समाचार निरंतर आ रहे हैं...रोटियाँ, दूध के चूरे, पके-पकाये भोजन, विटामिन की गोलियाँ, दवाइयाँ, रुपये-अनाज...”

रात में छत पर सुना कल हम लोगों के इलाके पर – राजंद्रनगर-लोहानीपुर में हेलीकॉप्टर से खाने के लिए सामान गिराये जायेंगे। ..कल दिल्ली से और भी कई बड़े मंत्री आ रहे हैं...सेना ने पटना शहर को बचाने का काम अपने हाथ में ले लिया है। आर्मी के जवानों ने बचाव-कार्य शुरू कर दिया है...राजेंद्रनगर में कल खाद्यसामग्री गिराये जाने की बात एकदम पक्की है। देख लीजिएगा!

और सचमुच दूसरे दिन सुबह सात बजे से ही राजेंद्रनगर में ‘एयर-ड्रॉपिंग’ का काम शुरू हो गया।

...आकाश में एक दैत्याकार आँखफोड़वा-टिड्डा जैसा भूरे रंग का फौजी हेलिकॉप्टर, साइरन की तरह अविराम पतली सीटी-सी बजाता हुआ, घोर गर्जन करता हुआ, छतों पर धूल का धूर्णिचक उड़ाता, ‘लो-फ्लाइंग’ करके धीरे-धीरे नीचे की ओर आता है। ‘थुथने’ को तनिक आगे की ओर झुकाकर, पूंछ ऊपर किया...। गरगराहट और भी तेज हो गयी और लो...लो..वह गिरा बड़ा बक्सा है...कार्ड बोर्ड का बक्सा..हा-हा...

‘सीं-ई-ई-ई-ई-...गरगरगरगरगरगर...गुड़रगुड़रगुड़र...सींई-ई-ई-ई—गर-गर-गरगरगरगरगर एक और आ गया उधर से ..उस छत पर एक बक्सा फिर गिरा। एक नहीं दो?’ ...सिं-ई-ई-ई- गरगरगरगर...इस छत पर भी गिरेगा, अपने छत पर भी गिरेगा...सिंई-ई-ई-ई ...पाइलट सिख नौजवान है, हंस रहा है ...ए, देखो। होशियार। बच्चों को पकड़ो। उड़ जायेंगे...वह चटाई उड़ी...साड़ी-ब्लाउज-तौलिया सब उड़ा ....सिंई-ई-गरगरगरगर-गिरा, गिरा...

निश्चय ही उनके पास मूवी कैमरा होगा। उनके पास-अर्थात हेलिकॉप्टर पर जो लोग बैठे हैं? ...कैसे लगते होंगे ऊपर से हर छतों के दृश्य ...सभी मकान के मुंडेर पर औरत – मर्द-बच्चे, इधर से उधर दौड़ रहे हैं, ऊपर की ओर हाथ पसारे। एक दूसरे को धकेलते, गिरते-पड़ते लोगों के झुंड, हर मकान के छत पर..?

...सिं-ई-ई-ई-ई—गरगरगरगर-गुड़र-गुड़र-गुड़र-अपने छत पर कोई लाल फ्लैग नहीं? लाल फ्लैग दिखलाओ...यहाँ भी गिराओ...ओ मिस्टर पाइलट – ऑन दिस रूफ...पाइलट साहेब, इधर भी...इधर भी...अरे यहां कुछ बिछा दो –सिगनल दो, यहां गिरावेगा...यहां-यहां...ए, पाइलट साहेब, सर्दारजी-ई ...गिराइए...ए, लाल ‘फ्लैगिंग’ करो...सिं-ई-ई-ई-ई-ई-गरगरगरगर-गुड़रगुड़ड-गुड़र...यहां इस छत पर क्यों नहीं गिरता? ...सिंई. ई ई ई ई। गरगर-गर-गर-गर-गर...।

मानुष बने रहो

पानी की धारा एकदम मंद हो गयी। पानी का रंग धारा की गति के साथ ही धीरे-धीरे बदल रहा है। बहाव बंद होते ही पानी का रंग कुछ ही घंटों में हरा हो जायेगा। पानी पर हरे रंग की पपड़ी जम जायेगी और हवा में सूखी मछली की गंध जैसी 'बिसाइन' महक।

आज कई स्थानीय दैनिक पत्रों ने एक पन्ने का 'अंक' निकाला है। पत्रकार मित्र सूर्यनारायण चौधरी कई हिंदी-अंग्रेजी अखबार लेकर आये। डेढ़ पृष्ठों में टेंडर, वांटेड, विश्वविद्यालयों तथा अन्य सरकारी अर्ध-सरकारी संस्थानों की विशेष विज्ञप्तियाँ। बाकी में पटना नगर की बाढ़ के सचित्र समाचारों के बीच-बीच में यत्र-तत्र 'बॉक्स न्यूज': दिल्ली से इतने हजार किलोग्राम मार्डन रोटी आ रही है। दिल्लीवालों के दैनिक रासन में रोटी की कटौती : विदेश से 'केक' और 'चीज' भी। आगरे के पेठे : कलकत्ते से भी रोटियाँ : प्राण-रक्षक दवाइयाँ और कपड़े।

पास के ही एक फ्लैट के सभी निवासी, जो अब तक बाहर खड़े हंस-बोल रहे थे, अचानक अंदर चले गये। फ्लैट एकदम निःशब्द! टोमेटो ने कुंडी खड़कायी। अभिभावक ने दरवाजे पर प्रकट होकर ऐसी मुखमुद्रा बनायी मानो पूजा का चंदा मांगनेवाले लड़कों से निबटना है-"क्या है? हैजे की सूई? हम लोग तो ताजा-ताजा गरम-गरम खाते हैं।

अखबार पढ़ने के बाद बात समझ में आयी कि क्यों कुछ देर पहले छत पर भाईसाहब इतने उत्तेजित, असंतुष्ट और क्रुद्ध थे। निश्चय ही उन्होंने आज का अखबार पहले ही पढ़ लिया था। हमारी छत पर हेलिकॉप्टर से पांच पैकेट जो गिरे थे उन्में से तीन, भाईसाहब तथा उनके परिवार और सगे-संबंधियों के हाथ लगे थे और तीनों में बस चिउरा, भुने चने, पॉप कार्न और दालमोठ? बाकी दो पैकेट में भी यही चीजें थीं। भाईसाहब के मुँह से, घुले हुए पानी की जाफरानी पीक की गुड़गुड़ाहट के साथ लानत-भरी आवाज निकली- "क्या तमाशा है!" फिर, पीक थूककर चालू हो गये – "एज इफ वी आर लेबरर.. तमाशा है...दिल्ली का ब्रेड कहाँ है? बतलाइए। बटर, केक, 'चीज' कुछ भी नहीं, सिर्फ चूड़ा-चना-फरही? ...बोरिंग रोड, कृष्णापुरी या पाटलिपुत्र कोलोनी की बात छोड़िए-यहीं, अभी, राजेंद्रनगर में ही कंट्राक्टर, फलाने प्रसाद सिंह के एरिया में जो पैकेट गिराये गये हैं सबमें 'ए-वन' चीजें-मतलब, ब्रेड-बटर-चीज सबकुछ-और हम लोगों की छत पर सिर्फ ये 'रॉटन' चबेने? बोलिए, इसका क्या जवाब है? एं? ...खुद, सरकारी रेडियो बोलता है कि 'राजेंद्रनगर इज ए पाश – एरिया-' आलीशान इलाका है राजेंद्रनगर और वहां गिरायी जाती हैं...दिस इज सीयर पार्सियालिटी...नहीं तो और क्या...अरे साहब, कहां गया—खा गया, सब खा गया..."

"जो कुछ मिला है आप भी चबा लीजिए। वरना..."
"वरना, क्या...?"
"वरना, नरम हो जाने पर कुरमुराहट नहीं..."

"हुँह! चबा लीजिए? ...आई एम नाइदर ए विलेजर नार एक लेबरर, आर ए बेगर..." मेरे मुँह पर अपनी मुँहतोड़ अंग्रेजी में 'रिटर्न शॉट' मारकर भाई-साहब का क्रोध तत्काल कुछ कम हो गया। अपनी एक 'केलिकुंजिका' से उन्होंने कहा – "पैकेट ले जाओ और उधर 'झोपड़-पट्टी' से जो लोग आये हुए हैं उन लोगों को 'डिस्ट्रिब्यूट' कर दो...खा गया,, सब खा गया...!!!"

बाकी दो पैकेट पानेवालों ने अपनी छत पर उपस्थित लोगों के बीच 'भाग बंटवारा' कर लिया था। चूरा और दालमोठ चबाता हुआ प्रोफेसर साहब का नौकर कहता है – "चूड़ा बहुत 'फाइन' है और दालमोठ एकदम पियोर पोस्टमैन में छना है..."

भाईसाहब नीचे गये तो मेरे पास एक दूसरे सज्जन सरककर आ गये। नम्र और दबी हुई आवाज में (फुसफुसाहट में) उनकी शिकायत थी: "उधर प्लास्टिक के बड़े-बड़े 'कैन' ...हां, इतने बड़े कि उसमें करीब चार घड़े पानी तो जरूर ...एकदम मिल्की व्हाइटकैन के मुंह पर टाइट किया हुआ जेड ब्लैक कैप...लवली...मैंने कल खुद अपनी आँखों से देखा है। हेलिकॉप्टर से गांधी मैदान में पानी पर 'थपाथप' गिराया गया, वहां से आर्मी का आदमी बटोरकर नाव पर लेकर वेस्ट पटना की ओर चले गये...मानता हूं कि हम लोगों के एरिया में पीने के पानी की कमी नहीं है लेकिन, कैन...?"

"उस छत पर अभी ही एक लाल फ्लास्क-छोटा-गिराया है।"

"उधर, लोहानीपुर की एक छत पर कपड़े का बंडल भी गिरा है...शायद, गलती से गिर पड़ा है।"

"एयर ड्रापिंग दो तरीके से करते देखा। एक, मुंह की ओर से –पाइलट के बगल में बैठकर, दूसरा-दुम की ओर से । मुँह की ओर से गिरानेवाला, पैकेट गिराते समय दुम ऊपर की ओर उठाकर, मुंह नीचे की ओर झुका लेता है और दुम की ओर से गिरानेवाला सिर ऊपर की ओर उठा लेता है...कभी-कभी इतना करीब आ जाता है कि उस छत पर लगा कि एक आदमी को हाथों-हाथ पैकेट दे दिया...धन्न है।"

अभी रेडियो से एक आवश्यक सूचना प्रसारित करके लोगों को सावधान किया गया है : 'कृपया अपनी छतों पर ऐसा सामान नहीं रखें जो उड़ सकते हों। हेलिकॉप्टर जब आपकी छत के ऊपर पहुँचे तो उस समय कपड़े, चटाई, किताबें वगैरह हटा लें, और छोटे बच्चों को भी...'

छोटे बच्चे ही क्यों, हेलिकॉप्टर के बवंडर में पड़कर क्षीणकाय अल्प-प्राण बड़े – बूढ़े भी उड़ जा सकते हैं.....और औरतों को चाहिए कि हेलिकॉप्टर के नीचे जाने के पहले दक्षिणी ढंग से साड़ी पहले लें। नहीं तो, जैसा कि अभी देखा-सारी बीच नारी है कि नारी बीच सारी है कि सारी है कि नारी है कि ...खाली बस नारी है।

कुंडी लड़की..मेडिकल कालेज के तीन-चार विद्यार्थी हाथ में स्टील छोटे-छोटे बक्स लेकर खड़े हैं- 'हैजे की सूई'। मेडिको वालेंटियर की टोली को 'गाइड' कर रहा है, हमारे ब्लॉक का किशोर टोमेटो। बेचारा थोड़ा तुतलाता है। और उत्तेजना अथवा उत्साह में तुतलाहट बहुत बढ़ जाती है। हमारे ब्लॉक के रविजी तो मेडिकल स्कवाड के साथ ही हैं? "भाई। वह हैजे और टाइफाइड दोनों एक ही साथवाली दवा नहीं है? क्या नाम है उसका। टी.ए....? सिर्फ हैजे की सूई? तब तो दो बार? ...लगा दो दाहिने हाथ के बाँह पर ही। अब मेरे दायें और बायें हाथ में कोई फर्ख नहीं...इतनी बार सूई ली है, फिर भी सूई देखकर तनिक घबरा ही जाता हूँ। और हैजे की सूई का दर्द बाढ़ में इतना बढ़ जाता है कि...बस, धन्यवाद...!! "

मेडिको-वालेंटियर ने बुखार की गोलियां, आँख में डालनेवाली दवा और बोरिक पाउडर की पुड़िया दी...जियो। सुखी रहो!!

पास के ही एक फ्लैट के सभी निवासी, जो अब तक बाहर खड़े हंस-बोल रहे थे, अचानक अंदर चले गये। फ्लैट एकदम निःशब्द! टोमेटो ने कुंडी खड़कायी। अभिभावक ने दरवाजे पर प्रकट होकर ऐसी मुखमुद्रा बनायी मानो पूजा का चंदा मांगनेवाले लड़कों से निबटना है-"क्या है? हैजे की सूई? हम लोग तो ताजा-ताजा गरम-गरम खाते हैं। बासी चीजें नहीं खाते। सूई लेने की क्या जरूरत ?"

टोमेटो हकलाता है। किंतु, कभी-कभी मौके पर वाजिब जवाब देते समय उसकी बोली जरा भी नहीं अटकती। उसने कहा- "एक आप ही लोग ताजा और गरम खाते हैं, बाकी सभी लोग बासी, ठंडा और सड़ागला खाना खाते हैं। क्यों?"

दरवाजा सशब्द बंद हो गया। सीढ़ियों से उतरते समय एक लड़का बोला – "असल बात कुछ और है। हम लोगों के साथ कोई लेडी स्टूडेंट नहीं है न। और इस फ्लैट में सब मिलाकर ज्यादा..."

“लेडी स्टूडेंट नहीं। कल से बी.एस.एफ. के जवान रहेंगे साथ। तब देखना कि बिना चीं-चपाड़ किये किस तरह...” शायद, रविजी बोल रहे थे।

अपने ब्लॉक के एक ‘हीरा लड़का’-रंजन की याद आती है। स्वस्थ, सुंदर, सभ्य और उत्साही। राजीव रंजन। अभी रहता तो निश्चय ही अपने साथियों का अगुआ होता। ढाई महीना पहले मोटर – दुर्घटना में उसकी मृत्यु हो गयी...

“आ रहा है। हेलिकॉप्टर फिर आ रहा है।”

हमारी पूसी बिल्ली सुबह से ही आतंकित है। हेलिकॉप्टर जब तक हमारे ब्लॉक के ऊपर मंडराता रहा, वह अपने नवजात बच्चों को मुँह में लेकर, इस कमरे से उस कमरे में सुरक्षित स्थान में पहुँचाती रही। उसके बाद से हवाई जहाज की भनभनाहट सुनते ही वह दौड़कर अपने बच्चों के पास चली जाती है। मैं उस को डराने के लिए बीच-बीच में कहता हूँ-“आ रहा है हेलिकॉप्टर।” और वह दौड़कर अपने चार दिन के बच्चों के पास पहुँच जाती है।

...आ रहा है। सचमुच, फिर आ रहा है। अब, शायद दोपहर का भोजन –लंच – देने आ रहा है। बिहटा से नहीं, पटना कालेज के मैदान में हेलिपेड बनाया गया है। वहीं से हेलिकॉप्टर में सारे पैकेट लोड किये जाते हैं। यहां का मेला अब वहां चला गया है। हेलिकॉप्टर को उड़ते और धरती पर उतरते देखने के लिए हमेशा जनसमुद्र उमड़ा रहता है। वहाँ गेट पर कड़ा पहरा है, इसके बावजूद... ‘आ गया। चलो छत पर। एक भी बाहरी आदमी को अपने ब्लॉक की छत पर मत रहने देना...कोई लाल कपड़ा ले लिया है न? आ गया। ए! इस बार चिल्लाओ मत। ऐसी जोर की गरगराहट में चिल्लाने से क्या फायदा? हाथ के इशारे से बताओ-हम भूखे हैं, प्यासे हैं।’

पॉश एरिया-आलीशान इलाके की सभी आलीशान इमारतों की छतों पर नर-नारियों की भीड़। धोती-लुंगी-पैंट-अंडर वियर-जाँघिया-साड़ी-बेलबाटम-फ्राक सलवार-मेक्सी-मिनी में झुंड-मुंड!! एक साथ दौड़ते, कभी इधर, कभी उधर। सभी के दोनों हाथ ऊपर आसमान की ओर उठे हुए अथवा हेलिकॉप्टर को अपनी छत की ओर बुलाते हुए, इशारा बताते-लाल झंडियाँ हिलाते हुए।

“...सीं-ई-ई-ई—गरगरगरगरगर-गुड़रगुड़रगुड़र..आ गया, अपने छत पर भी आ गया। अरे रे। फिर कपड़े-कागज-पत्तर सूके पत्ते उड़े...गिरा! गिरा! इस बार तो पैकेट की वर्षा हो रही है। बगल हो जाओ। गिरा, गिर। क्या है? लोफ, लोफ..डबल रोटी गिर रही है इस बार ...दौड़ के। लपक लो। हट जाओ। मेरा है, मैंने लूटा। इधर कहां?..वाह! बहादुर लड़की है..बहादुर नहीं, लुटारू ललना। फिर आयेगा। तैयार रहो...”

सुबह से ही, जब पहली बार पैकेट गिराये जा रहे थे, तभी से ‘एयर ड्रापिंग’ के इस अभूतपूर्व दृश्य के ‘बैक ग्राउंड’ में एक फिल्मी रिकार्ड बजाने का मन कर रहा है। किस फिल्म का वह गाना है, नहीं जानता। किंतु, ‘मुखड़ा’ से लेकर ताल और बोल सब एकदम फिट। अगर मेरे पास रिकार्ड प्लेयर होता और वह रिकार्ड होता तो हर बार एयर ड्रापिंग के समय छत पर निश्चय ही बजाना शुरू कर देता।

चूँकि, मेरे पास कुछ भी नहीं। इसलिए पैकेट गिराते समय मेरे मन में वह गाना मय म्यूजिक और मुखड़े के-कुछ नयो ‘बोल’ लेकर बजता रहता है। सीं-ई।ई।ई।ई। - गरगरगरगर-गुड़रगुड़रगुड़र-आ गया। जी आ गया। गिरा गिरा गिरा...लूट लूट लूट ले..ए पायलट साहेब पैं-पैं-पैं पपम पपम में ए-ए-खाना मिलेगा, पीना मिलेगा, भैया की शादी है। सब कुछ मिलेगा, खाओ मेरे यार, पीओ मेरे यार। लूटो मेरे यार, मीटो मेरे यार ...पैं पैं पैं पपम पपम पैं-ए-एपायलट साहेब, इधर भी गिराइए। जरा रहम खाइए, यों न दौड़ाइए। पानी भी पिलाइए। फ्लास्क भी गिराइए। इधर-इधर-इधर गिरा, उधर-उधर-उधर गिरा। क्या-क्या गिरा, क्या-क्या लूटा। एँ...ये...चूड़ा-चना-दालमोंठ? छोड़ों नहीं यार, फाँको मेरे यार। जो भी गिरे लूट ले, जो भी मिले ठूँस ले।

महँगा है फोकट का माल ...पैं...पैं...पैं पपम पपम पैं-एँ...
"अरे? तुम तुम यहाँ बैठे हो। ऊपर छत पर जाकर देखो..."
"पाँवरुटियर वृष्टि होच्छे"-लतिका हड़बड़ाती हुई आयी।
"सिर्फ पाव रोटी या उसके साथ और भी कुछ?"

"पोलिथिन पेपर के बड़े-बड़े पैकेट गिराये जा रहे हैं। पता नहीं उनमें और क्या –क्या है।"

दिल्ली की- कलकत्ते की रोटी, आस्ट्रेलियन मक्खन, यूके. का केक, चीज और आगरे के पेठे? मेरी रसना अचानक रसवंती ही नहीं-बाढ़ आ गयी मुंह में। बिना चप्पल के ही छत पर दौड़ा। किंतु, पहुँचते ही हेलिकॉप्टर के बवंडर ने मेरे सिर पर, बाल-आँख-कान, मुँह में टोकरी भर धूल झोंक दिया। पनिआयी हुई जीभ अचानक सूखकर काठ-जैसी हो गयी। छत के एक कोने में दीवार के सहारे खड़ा होकर धूल झाड़ रहा था, आँख मल रहा था कि एक उछलती-कूदती किशोरी –सी दीखनेवाली कन्या ने मेरे हाथ में एक थैला थम्हाते हुए कहा. "यहाँ इस तरह खड़ा रहिएगा तो कुछ भी नहीं मिलेगा। लीजिए।"

'माल' से भरा थैला लेकर नीचे उतर आया। लतिकाजी के आगे यह आस्मानी तोहफा डालकर सीधे नहाने के घर में घूसा...मेरी देह के प्रत्येक रोम-कूप में धूल के कण समा गये थे और सारे शरीर में खुजली और जलन हो रही थी। ऊपर छत पर कुहराम और हाय-तोबा जारी था- "लेकिन, मार्डन का ब्रेड कहाँ है? यह तो लोकल अन्नपूर्णा है...दिल्ली वाली रोटी नहीं गिरायी? बटर-केक-चीज कुछ भी नहीं है? पेठा भी नहीं? ...तमाशा है! ब्रेकफास्ट के समय इधर चना-चबेना और अभी लंच में भुआई हुई फफूंद-लगी लोकल लोफ-असल माल सब उधर ही-खा गया! सब खा गया!"

दो दिन तक सुबह से शाम तक तीन-चार वार, दो-दो हेलिकॉप्टर हमारे गोलंबर के ऊपर 'लो फ्लाइंग' करके रिलीफ बरसाते रहे। उनकी गरगराहट मनमनाहट की प्रतिध्वनियाँ, छत पर (सिर पर) 'भूत-नृत्य' करते हुए लोगों का कुहराम...उनकी धमाचौकड़ी सहते-सहते अनायास ही तन पत्थर का तथा मन 'संत' का हो गया है।

दरवाजे पर आकर एक 'भद्र स्त्री' भाषण देने लगी – "यह तो गरीबों को बाँटने के लिए गिराया जा रहा है। हम लोगों ने सुबहवाला सब सामान बांट दिया है और अभी भी जितना मिला है, सब गरीबों को दे देंगें।"

लतिका कह रही थी- "हम लोग भी बाँट देंगे। रिक्शेवाले हैं, दाई हैं।"
किंतु वह भद्र स्त्री कहती जा रही थी- 'दाई और रिक्शेवाले गरीब थोड़े हैं। हम लोग उधर जाकर ....'

मैं बाथरूम में नहाता हुआ ठंडे दिमाग से सब कुछ समझ रहा था...बात यह हुई होगी कि इनकी छोटी बहन ने कहा होगा कि एक थैला 'तीस नंबर' को दे दिया। इस पर परिवार के सभी उसकी मूर्खता पर नाराज हुए होंगे और उनको विश्वास हो गया होगा कि तीस नंबर को जो थैला दिया गया है, उसी में सब 'असल माल' –मार्डन ब्रेड, बटर, केक, चीज और पेठे...

"आपसे यह किसने कह दिया कि हम गरीब नहीं हैं? मैं बाथरुम से बाहर निकलकर बोला।

हमने दरवाजा बंद ही किया था कि दस्तक पड़ी। खोलकर देखा, इंप्रूवमेंट ट्रस्ट के नये मकान के बाढ़पीड़ितों का एक छोटा – सा जत्था – चार-पांच छोटे-छोटे लड़के-लड़कियाँ और दो-तीन मर्द। एक औरत – "बाबू! मालूम हुआ है कि हजूर एक झोला भरकर रोटी लूटे हैं...बच्चा सब भूखल हैं।"

यह पूछने की जरूरत नहीं समझी कि कहां और किससे मालूम हुआ है। थैला उनके सुपुर्द कर दिया। जत्थे के अगुआ ने रोटियों को गिनकर कहा- "बस ? ई तो छवे गो है। मालूम हुआ कि"

उस दिन सांझ तक हर दस-पंद्रह मिनट के बाद दरवाजे की कुंडी खट-खटाती रही – "बाबू ! सुना कि आपको एक बोरा रोटी और विलायती गुलगुला और दूध का पौडर हाथ 'लागल' है...अरे हजूर बाबू साहब ! आप लोगों को भगवानजी बहुत दिया है ....'कोनों' चीज का 'कम्मी' है? थोड़ा 'गरीबों' का खियाल करिये एक तो गिरानेवाला एक 'चश्मखोर' कि जहां पर गिराना चाहिए वहां नहीं गिराया तिस पर आप लोग 'बाबू भैया' होकर ऐसा 'गरीब मार' करियेगा तो ...गरीबन के हक...भला उतना बड़ा थैला में छवे गो रोटी होगा...खाली रोटिये होगा भला...?"

"भद्र स्त्री ने अच्छी सजा दी!"

दो दिन तक सुबह से शाम तक तीन-चार वार, दो-दो हेलिकॉप्टर हमारे गोलबर के ऊपर 'लो फ्लाइंग' करके रिलीफ बरसाते रहे। उनकी गरगराहट मनमनाहट की प्रतिध्वनियाँ, छत पर (सिर पर) 'भूत-नृत्य' करते हुए लोगों का कुहराम...उनकी धमाचौकड़ी सहते-सहते अनायास ही तन पत्थर का तथा मन 'संत' का हो गया है।

एक ओर, गुरू-गौरव गर्जन के साथ ऊपर से करुणा और दया बरसायी जा रही है। दूसरी ओर स्वयंसेवी संस्थाएं चुपचाप ट्रकों, नावों और ठेलों पर खिचड़ी, चावल, रोटी, दूध, नमक, पानी, मोमबत्ती, दियासलाई, कपड़े और दवाइयाँ-स्लम तथा गरीब मुहल्लों में बाँट रही हैं।

रोज-रोज कोई-न-कोई नयी राहत की घोषणा होती रहती है। प्रत्येक 'कार्ड होल्डर' को पांच किलो गेहूँ मुफ्त : रिक्शाचालकों को भी! पाँच किलो अनाज मुफ्त में मिलेगा। सरकारी कर्मचारियों को पंद्रह दिनों का वेतन अग्रिम मिलेगा। सिर्फ पंद्रह ही दिनों का नहीं ...पुनर्विचार के बाद फैसला लिया गया है। एक महीने का वेतन बतौर मिलेगा जिसका भुगतान बाद में धीरे-धीरे किया जा सकेगा। सेना के सभी अंग राहत में लगे हुए हैं। जलसेना (नेवी) को भी सतर्क और तैयार रहने का आदेश दिया गया है। बी.एस.एफ. के जवान डाक्टरों को लेकर संक्रामक रोगों से बचने के लिए लोगों को टीके...! और एंफिबियन (मेढक गाड़ी) आ रही है जो जल और थल में समान रूप से दौड़ेगी...

पानी का बहाव बंद होने के बाद सड़ांध के साथ 'ब्लिचिंग-पाउडर' की उत्कट गंध से हवा बोझिल रहती है। किंतु मेरी पंचेद्रियों में से अधिकांश शिथिल हो गयी हैं। इसलिए, किसी तरह का कष्ट नहीं हो रहा।

ऐसी ही मनःस्थिति में – पता नहीं क्यों सेल्फ से 'परती : परिकथा' निकालकर ले आता हूँ। थोड़ी देर, पृष्ठों को उलट-पलटकर पढ़ने की चेष्टा करता हूँ। पढ़ता हूँ – 'कोनार नदी के के किनारे –डैमसाइट पर, एक विशाल 'केन' की छाया में बैठते हुए कहा था जीत ने – न जाने कोसी का काम कब शुरू हो...यह मेरा इलाका है। कोसी-कवलित अंचल। जहां हर साल लाखों प्राणियों की बलि लेती है कोसी महारानी.....'

"जितेंद्र ने इरावती से कहा था- 'आपका दुख मैं समझता हूँ। अनुभव करता हूं, आपके यहां की नदियों में खून की बाढ़ आयी थी। एक अंधवेग, एक पागलपन, एक जुनून। रक्त की धाराएं बहीं...सिर्फ बाढ़ ही नहीं, दावानल भी। भयंकर लपटें उठानेवाला। सब कुछ जल गया। धन-संपत्ति, कला-कौशल। मैं उसकी भीषणता की कल्पना कर सकता हूँ। और, आप भी कल्पना कीजिए उस भूभाग की। डायन कोसी के सुफेद-बलुवाही आंचल पर बिखरे लाखों नये नरकंकालों की कल्पना से आप डर तो नहीं जायेंगी...?"

"इरावती का सपना : उसका प्यार फिर पनप रहा है। इंसान सिर्फ कत्ल और बलात्कार ही नहीं करता। इंसान गढ़ भी सकता है। गढ़ रहा है। बना रहा है। रचना कर रहा है-समाज के लिए, आवाम के लिए। वीरान को बसाने के लिए, वंध्या धरती को शस्य-श्यामला बनाने के लिए?..."

“समाज को मानवीय और मनुष्य को सामाजिक बनाना ही मुक्ति का एक-मात्र पंथ है। हमारी मिट्टी में सांस्कृतिक सोना फल सकता है...प्राण नहीं, अनुभूति नहीं। अब मनुष्य को यंत्र चला रहा है...टेक्नालोजी के युग में हम लोग जीवन-उपभोग का मूल तकनीक ही खो बैठे हैं...”

‘परती : परिकथा’ की इन पंक्तियों को रेखांकित करके रख देता हूँ। फिर ‘जुलूस’ निकाल लाता हूँ। अंतिम पृष्ठ की अंतिम पंक्तियों को पढ़ता हूँ : ‘मैं एक विशाल परिवार की बेटी हूं...इन आत्मीय स्वजनों के बीच पारस्परिक सहानुभूति और सहयोगिता फिर से पनपाऊँगी ....मैं अपनी सत्ता को इस समाज में विलीन कर रही हूँ...लोक संस्कृति – मूलक समाज के गठन के लिए...!!’

‘कलरबक्स’ उठाकर लाता हूँ। कूची से ‘परती : परिकथा’ तथा ‘जुलूस’ की चिह्नित पंक्तियों पर गहरा काला रंग पोतकर भी संतोष नहीं होता। मन में जमी हुई अशांति पिघलती नहीं। तब दियासलाई की एक सलाई जलाकर इन पृष्ठों को छुलाता हूँ। अचानक, कोने में बैठे देवता चिल्ला उठते हैं-“ए-ए-ए की होच्छे? यह क्या हो रहा है? तेरा दिमाग खराब हो गया है क्या?”

फूट-फूटकर रोता हुआ कहता हूँ-“ठाकुर! तुम तो जानते हो – कितनी अगाध आस्था , अटूट विश्वास और दृढ़ निष्ठा के साथ मैंने ये पंक्तियां लिखी थीं। इन चरित्रों के निर्माण के लिए मैंने अपने हृदय का कितना रक्त...!”

“साला। गांजाखोर, अंहकारी। बोल, तुमने लिखी थीं ये पंक्तियाँ...? ...मैं-मैं-मैं- करके तभी से बकरे की तरह मेंमिया रहा है और औरतों की तरह रो रहा है? तुमने लिखी थीं...?”

होश में आया – “नहीं ठाकुर ! मैं कौन होता हूँ लिखनेवाला – चरित्र गढ़नेवाला? तुमने जो भी, जैसा भी लिखवाया – लिखता गया।”

“तो, फिर अपने मन से इन पंक्तियों पर कालिख क्यों पोत दिया? आग क्यों लगा रहा था? और कालिख पोतने से, आग लगाने से क्या ‘अक्षर’ मिट जायेंगे? ...मैंने मानुष की क्या परिभाषा दी है? याद है?”

“जिसकों अपने मान का होश हो-वह ‘मानुष’....”

“तब ? हमेशा अपने मान का होश रखो। मानुष बने रहो। रोने से कुछ नहीं होगा। यों मार्डन की रोटी और विलायती गुलगुला तुम नहीं लूट सके, इसका दुख मुझे भी है।” –ठाकुर हंसे-“अब जरा बाहर निकलकर खोजो। कहीं मिल ही जाये।”

मन का अवसाद दूर हो गया। किताबों को सिर से छुलाकर सेल्फ में रख दिया।

उस दिन सुबह । ‘हिंदुस्तान स्टैंडर्ड’ के प्रतिनिधि जनार्धन ठाकुर आये । जनार्दन जी अंग्रेजी के पत्रकार हैं। लेकिन, मुझसे हमेशा मैथिली में हो बोलते हैं। आते ही बोले- “हमर किछु प्रश्न अछि – बाढ़ क संबंध में...”

“बाढ़ क संबंध में? ...मुझसे इस बाढ़ का क्या संबंध?”

“संबंध है।”

“जनार्दनजी! दया करके बाढ़ के बारे में कोई चर्चा नहीं । बाढ़ की बातें भी अब गंधाने लगी हैं।”

उन्होंने मेरी बात को अनसुनी करके पूछा – “पटना का क्या भविष्य है अर्थात् भविष्य क्या होगा? ...हां मैं जानता हूं कि आप कोई भविष्यज्ञाता, ज्योतिषी नहीं रचनाकार हैं।” जनार्दनजी का मुखमंडल गंभीर था।

मैं कुछ देर चुप रहा फिर कहने लगा- "बिहार की राजधानी को पटना से हटाकार फिर राजगीर ले चलिए। यदि यह संभव नहीं तो फिर ऐसा कीजिए कि सारे नगर के हर घर की छत पर नाव, लाइफ बेल्ट यानी किसी स्टीमर पर संकट की घड़ी में प्राणरक्षा के लिए जो-जो उपकरण रहते हैं- रखना अनिवार्य कर दीजिए ...प्लास्टिक के सामान बनानेवाली कंपनियों से छोटी-छोटी डोंगियाँ बनाने को कहिए ...हर मकान के ग्राउंड फ्लोर के रेंट में सैंकड़े पचहत्तर की कमी और ऊपर के तल्लों में थोड़ी सी वृद्धि ...जीवन भीमा निगमवालों से परामर्श करके- हर मकान मालिक से हर महीने के भाड़े में जीवन बीमा का अनिवार्य अंश...और पटना ही क्यों, बाढ़ से किसी भी प्रदेश का पिंड कभी नहीं छूटने का...।"

मैंने देखा, जनार्दनजी अपनी चोटी-सी डायरी में नोट कर रहे हैं –"अरे! आप तो सचमुच...?"

"सचमुच नहीं तो और क्या ?" वे डायरी अपने पाकेट में रखकर उठ खड़े हुए।

मैंने अपना प्रण पूरा किया। बाढ़ के पानी में पैर नहीं दिया। छत के रास्ते दूसरे फ्लैट की सीढ़ियों से उतरकर – ईंटों पर पैर रखता हुआ-सड़क पर आया और रिक्से पर अकेला बैठकर उधर ही चला जिधर से बाढ़ के जल को पहले-पहल आते देखा था...रास्ते में देखा – दीवारों पर लाल दाग लगाकर अंग्रेजी में काले रंग से 'एच.एफ.एल. 75 लिखा जा रहा है। रास्ते चलते एक युवक ने दूसरे से कहा- "एफ.एल. तो सुना था। यह एच.एप.एल. क्या है भाई?"

सरकारी कर्मचारियों को पंद्रह दिनों का वेतन अग्रिम मिलेगा। सिर्फ पंद्रह ही दिनों का नहीं ...पुनर्विचार के बाद फैसला लिया गया है। एक महीने का वेतन बतौर मिलेगा जिसका भुगतान बाद में धीरे-धीरे किया जा सकेगा। सेना के सभी अंग राहत में लगे हुए हैं। जलसेना (नेवी) को भी सतर्क और तैयार रहने का आदेश दिया गया है।

कॉफी हाउस खुला देखकर प्रसन्न हुआ। लेकिन, अंदर कदम रखते ही फफूंद की गंध लगी तो लौटना चाहा था। देखा, सारे कॉफी हाउस में बस एक मात्र सतीश आनंद – कला संगम नाट्य संस्था के प्राण – चुपचाप बैठे हैं। उनका चेहरा देखकर डरा – बाढ़ में निश्चय ही इनका बहुत नुकसान हुआ होगा, शायद ...मुझे देखकर उनका चेहरा तनिक खिला। बोले – "आज ही, अभी ही थोड़ी देर पहले खुला है। मैं ही पहला ग्राहक हूँ और आप दूसरे..."

"दूसरे तो सत्यनारायण ही हो सकते हैं...और क्या हाल हैं? इतने उदास क्यों हे?"

"उदास? जी, उदास नहीं चिंतित।"

"अरे राम। कॉफी है या क्लोरोकॉफी? ...कैसी चिंता? सार्वजनिक या व्यक्तिगत?"

"साहब, एक नया नाटक खेलने को सोचा था। वह तो अब निकट भविष्य क्या दूर भविष्य में भी...अजब है, स्टेज के लिए कोई लड़की या स्त्री मिल ही नहीं रही... "

"आपने क्या उम्मीद की थी? इस बाढ़ में कहीं से भंसती हुई आ जायेगी?"
मैंने पूछा।

सतीश अप्रतिभ हुए। फिर कुछ याद करके बोले – "इधर आपकी मुलाकात "यौनाचार्य" से नहीं हुई है? इस बाढ़ ने उनकी सारी दमित वासनाएँ...लीजिए, नाम लिया और आप प्रकट हो गये।" – सतीश ने बाहर की ओर देखकर कहा।

हमारे कॉफी हाउस के एक एडवोकेट मित्र है। पिछले साल हिंदी में यौन- मनोविज्ञान की कहानियों का एक संग्रह प्रकाशित करवाया है। पुस्तक प्रकाशन के बाद मित्रों ने उन्हें 'यौनाचार्य' की उपाधि प्रदान की तो उन्होंने सहर्ष स्वीकार कर लिया। अपना परिचय देते समय वह यह कहना नहीं चूकते कि वे चार-चार बार रस्टीकेट हो चुके हैं और यह कि वे छात्रों के 'चिर नेता' हैं और ताउम्र रहेंगे।

यौनाचार्य ने सगर्व स्वीकार किया – "भाई ! इस बाढ़ से पटना नगर और इसके नवागरिकों की जो भी तबाही हुई हो – मैं तो फायदे में क्या ...जो आज तक कभी नसीब नहीं-वह इस बाढ़ के प्रताप से या महिमा से कहिए तीन-तीन यंग लड़कियाँ और कई स्त्रियां मेरे घर में शरणार्थी होकर आयीं...सुबह में कोई चाय दे रही है तो कोई हलुआ तो कोई आमलेट तलकर ला रही है। कोई दोपहर को अपनी प्रेमकहानी कहती तो कोई रात में दो बजे तक गाना सुनाती। और मेरा बाथरूम चलकर जरा सूँघ लीजिए – नहीं विश्वास हो तो- लेवेंडर की सुरभि से सदा सुरभित रहता है ...अब आपको क्या बतायें?"

उस दिन ही नहीं, एक सप्ताह तक अपनी किस्मत खुलने का किस्सा लोगों को कॉफी पिला-पिलाकर सुनाते रहे। यहाँ तक कि दिल्ली के एक वरिष्ठ पत्रकार बाढ़ के सिलसिले में पटना आये थे। उनको भी अपना भाग्य फिरने का किस्सा सुनाने पहुँचे। होटल में मौका नहीं मिला तो हवाई अड्डे तक पहुँचकर वकत्व्य देने के लहजे में उनसे कहा- "साहब. आदमी क्या? इस बाढ़ में तो मछलियाँ भी 'सेक्सी' हो गयी थीं..."

मुझे उसी दिन लगा था कि यौनाचार्य अब 'काम' से गये। और इन पंक्तियों के लिखते समय उनके मित्रों से तथा स्वयं उनके मुँह से सुना कि उनकी अवस्था संगीन है। सिर चकराता है और सिर के अंदर 'वैकुअम' जैसा लगता है। आँखों के आगे सरसों के फूल नजर आते हैं। डाक्टरों ने कोई सिरियस रोग बताया है। जिसका संबंध –नाक तथा आंख के जरिए – दिमाग से है...भगवान उनको चंगा करें।

यों, पटना शहर भी बीमार ही है। इसके बाँह में हैजे की सूई का और दूसरी में टाइफायड के टीके का घाव हो गया है। पेट से 'टेप' करके जलोदर का पानी निकाला जा रहा है। आँखें जो कंजक्टिवाइटिस (जाये बांग्ला) से लाल हुई थीं- तरह-तरह की नकली दवाओं के प्रयोग के कारण क्षीणज्योति हो गयी है। कान तो एकदम चौपट ही समझिए- हियरयिंग एड से भी कोई फायदा नहीं। बस, 'आइरन लंग्स' अर्थात् रिलीफ की सांस के भरोसे अस्पताल के बेड पर पड़ा हुआ किसी तरह 'हुक-हुक' कर जी रहा है।

"ॐ सर्वविघ्नानुत्सारय हुँ फट् स्वाहा..."
(1975)